CHEETAL

JOURNAL OF

The Wildlife Preservation Society of India

HABITAT ISSUE

Vol. 38 Dehra Dun, 1999 No. 3-4

This you may never see !
Sambar fawn, silent and secretive.

Photo : J. H. Johns
Courtesy : Forest World of New Zealand.

CONTENTS

1. Habitat Conservation by I.S. Negi, I.F.S. (Retd.) ... 1
2. Foul Murder of Our Wild Animals Stop it Now or by Feroze Gheyara ... 8
3. Conservation : Note on Electrocution Death and Funeral of a Hanuman Langur in Free-Ranging City Group at Jodhpur (Rajasthan) by L.S. Rajpurohit & S.K. Goyal ... 15
4. Some Aspects of Breeding Biology of Crested Lark by M.M. Trigunayat and Kailash Navrang ... 21
5. Preliminary Investigations of Bird Community Structure around Aligarh Fort by Mrs. Daizy Saud Khan ... 24
6. Mount Abu—The Wild Heritage of the Aravalli by Rajeeve Jugtawat, R.F.S. ... 34
7. The Role of Silviculture in the Genetic Conservation of the Tiger *(Panthera tigris)* by Christopher J. Hamar ... 38
8. Musings by Bulu Imam, Hazaribagh ... 57
9. हिम युग का प्राणी—गेंडा ... 61
10. Know Your Wildlife ... 94
11. Sloth Bear ... 95
12. Some Interesting Facts about Birds ... 97
13. Did You Know ... 98

हिमयुग का प्राणो--गेंडा

—लेखक, फोटोग्राफर : रामेश बेदी

दस लाख साल पुराना पशु

पंजाब और हरियाणा की राजधानी चंडीगढ़ के उत्तर में आठ किलोमीटर दूर पिंजौर नामक एक स्थान है। यहां की खुदाई में चट्टानों के अंदर पुराने प्राणियों के अश्मीभूत अवशेष (फौसिल्स) मिले हैं, उनसे मालूम होता है कि दस लाख साल पहले यहां गेंडे विचरते थे। गुजरात के जिला भावनगर में पीरम द्वीप में लगभग दस लाख साल पुराने प्राणियों के जीवाश्म बड़ी संख्या में मिले है। खुदाई से पता चला है कि दस लाख साल पहले इस द्वीप में गेंडे और जिराफ परिवार के जानवर बड़ी संख्या में रहते थे।

चीनी पुराविदों को चूने के पत्थर वाली एक गुफा में गेंडे और पांडा के जीवाश्म मिले हैं। दक्षिणी ग्रीस में चालकिडिकी प्रायद्वीप में पेट्रालोना गुफा में खोजते हुए एक निलंबी निक्षेप में एक जवान आदमी का सुरक्षित अस्थिपंजर मिला था। यह चार लाख साल पुराना समझा जाता है। मानवशास्त्रियों के मत में ये यूरोप में पाये जाने वाले प्राचीनतम मानव अवशेष हैं। इस गुफा में गेंडे, भालू और हिरण के आग पर पकाये हुए मांस के अवशेष भी मिले हैं। इसका मतलब है कि चार लाख साल पहले गेंडा ग्रीस में विचरने वाला पशु था और आदि मानव उसका मांस खाता था।

हिमयुग का प्राणी

उत्तरी हिमालय की हिम रेखा में किसी समय गेंडे के पूर्वज बसते थे, यह बात उन जीवाश्मों (फौसिलों) के निरीक्षण से पता चलती है जो 4,265 से 4,570 मीटर की ऊंचाइयों पर पाये गये हैं। कैप्टन आर० स्ट्रेची ने माणा और नीति दर्रों से तथा टी०एच० ह्यूग्स ने मीलम से 1873 के लगभग इन्हें इकट्ठा किया था। इनमें गेंडे सरीखे एक जानवर के जीवाश्म भी थे।

अंतिम हिमयुग (लगभग 14,000 ईस्वी पूर्व से 11.000 ईस्वी पूर्व) की जो गुफाएं फ्रांस और स्पेन में मिली हैं उनमें गेंडा चित्रित है। दूसरे पशुओं के चित्रों की तुलना में यहां गेंडे के चित्र कम ही हैं।

ऐब्बे एच० ब्रुइल ने अपनी पुस्तक 'फोर हंड्रेड सेंचुरीज ऑफ केव आर्ट' (गुफा कला की चार सौ शताब्दियां) में गेंडे के दो चित्र पृष्ट 82, चित्र संख्या 44 और पृष्ठ 105, चित्र संख्या 70) दिये हैं।

इनमें से एक में तो यह युद्ध की मुद्रा में दिखाया गया है—शरीर को कुछ समेटकर और गरदन को सिकोड़कर जैसे वह दुश्मन पर हमला करने को तैयार हो। दोनों चित्रों में इस पशु के दो सींग हैं जिनमें अगला तो खासा लंबा और पिछला बहुत छोटा दिखाया गया गया है। प्राणिशास्त्र के पंडितों के अनुसार इसे रीनोचेरीस तिकोरीनुस (Rhinoceros tichorinus) कहते हैं। एक चित्र 0.70 मीटर और दूसरा 0.75 मीटर लंबा है।

पुरातत्व में

मोहेंजो-दड़ों की खुदाई से प्राप्त सामग्री में गेंडा जिस बहुलता और यथार्थता के साथ अंकित किया गया है उससे पता चलता है कि यह वहां भलीभांति जाना-पहचाना प्राणी था। सिंधु घाटी की सभ्यता (लगभग 2,500-1,700 ईस्वी पूर्व) के दौरान सिंधु में और शायद सुदूर पश्चिम में बहुत दूर तक बहुतायत से पाया जाता था।

मोहेंजो-दड़ो की खुदाई से प्राप्त सामग्री में सात मुहरें (सील) ऐसी मिली हैं जिन पर गेंडा अंकित है। प्रत्येक मुहर पर एक सींग वाला गेंडा बनाया गया है जो पहले हिमालय की तराई में पाया जाता था। इन सीलों पर गेंडे का प्रभावशाली अंकन करने की कोशिश की गई है। एक सील में खाल का मोटापा बखूबी दिखाया गया है। उस पर झुर्रियां और तहें भी हू-ब-हू जिंदा गेंडे की-सी बनी हैं। कंधे और नितंब की मोटी तह के ऊपर स्थूल उभारों को दिखाने के लिए बिंदुकों का प्रयोग किया गया है। कुछ सीलों पर यह रचना उठे हुए बिंदुकों के बजाय छिद्रों द्वारा दिखाई गई है। ये छिद्र एक बारीक ड्रिल से बनाये गये हैं। अन्य आकृतियों में इन्हें बनाने के लिए आच्छादन रेखाओं (hatching) का प्रयोग किया गया है। इन विभिन्नताओं के बावजूद भी कहा जा सकता है कि प्रत्येक उदाहरण में इस प्राणी के अंकन में यथार्थता प्रदान की गई है। यहां तक कि सूअर सरीखी जो घूर्त्तता इस प्राणी की आंखों में रहती है वह भी इन अंकनों में दिखाई देती है। 342 से 345 संख्या की सीलें इसके अच्छे उदाहरण हैं।

सीलों में गेंडे के मुख के नीचे चारे के लिये खुरली रखी गई है। खुरली की आकृति यद्यपि प्रायः सभी सीलों पर एक जैसो ही है परन्तु 345 संख्या की सील पर यह अपेक्षाकृत बड़ी है। गेंडे की आकृति के ऊपर सीलों पर कुछ लिखा है जो अब तक पढ़ा नहीं जा सका। सभी सीलों के अक्षर आपस में मिलते नहीं हैं और उन पर गेंडे की आकृतियां और आकार भी भिन्न-भिन्न हैं। इससे अनुमान होता है कि ये सीलें उस समय प्रशासन के अलग-अलग कामों में इस्तेमाल होती थीं। दूसरी कल्पना यह है कि व्यापारी लोग अपना माल बाहर भेजते समय इनके द्वारा सील कर देते थे।

इस प्राचीन नगरी की खुदाई से मिले मिट्टी के खिलौनों में गेंडा भी है। गेंडे के जो खिलौने मिले हैं वे अनघड़ हाथों से बनाए प्रतीत होते हैं। मालूम होता है कि ये कुम्हारों के बच्चों द्वारा खेल में बनाए गए खिलौने हैं। मोहेंजो-दड़ो के बच्चों का यह प्यारा जीव था। इन खिलौनों में झुर्रीदार खाल को असल जैसा रूप देने के लिए या तो गढ्डों का प्रयोग किया है या रेखाच्छादनों (hatching) का। कुछ उदाहरणों में मिट्टी की पट्टियां लगाकर खाल की उभरी तहें बनाई गई हैं।

सिंधु घाठी की खुदाई से प्राप्त सामग्री में हाथीदांत से बनाये गये गेंडे का एक लघुरूप नेशनल म्यूजियम, नई दिल्ली में प्रदर्शित है। लगभग ढाई सेंटीमीटर लंबी यह कलाकृति हाथीदांत की नक्काशी का शानदार नमूना है। मालूम होता है कि पांच हजार साल पहले मोहेंजो-दड़ो के कुलीन लोगों की बैठकों में यह सुन्दर कलाकृति शोभा के लिए रखी गई थी। इससे गेंडे के प्रति उन लोगों की घनिष्ठता का संकेत मिलता है। हड़प्पा की खुदाई में गेंडे की एक छोटी प्रतिकृति मिली है।

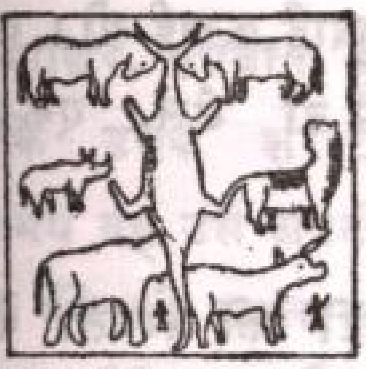

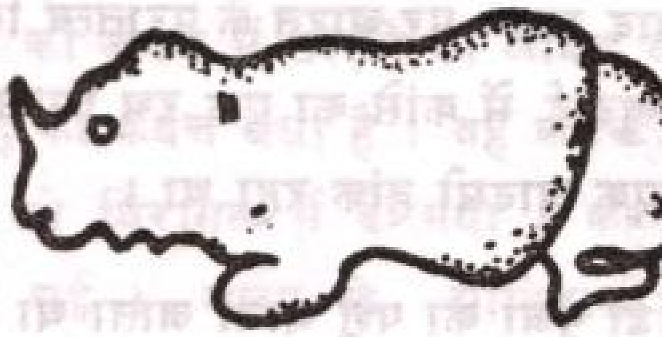

कुमार गुप्त के सोने के सिक्के पर गेंडे के शिकार का अंकन

सिंधुवासियों का महिषमुंड देवता

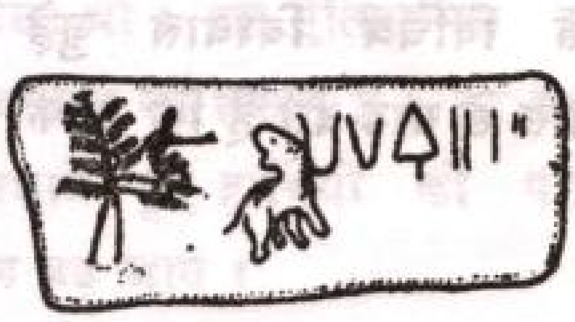

महाराष्ट्र के अहमदनगर जिले में दायमाबाद स्थान पर भारत के पुरातत्व विभाग ने खुदाई कराई थी। वहां से हड़प्पाकालीन वस्तुएं निकली थीं। 1974 की खुदाई में कांसे का एक रथ मिला था जिनमें दो बैल, एक हाथी, एक भैंसा और एक गेंडा जुते हुए थे। रथ को एक आदमी हांक रहा था।

पांच हजार साल पहले मोहेंजो-दड़ो में गेंडा पूजा का पशु माना जाता था। सिंधु घाटी की सभ्यता के जो लोग मोहेंजो-दड़ो में बसते थे उनमें विश्वास था कि यह उन्हें विपत्तियों से बचाने की सामर्थ्य प्रदान करता है। मिट्टी की चौकोर पट्टियों पर वे गेंडे को अंकित करते थे। गंडे-तावीज के रूप में वे इसे धारण करते थे।

महिष-मुंड देवता सिंधुवासियों का परम देव था। खुदाई में मिले उसके चित्र में सिर पर भैंस के सींग का मुकुट है। इसके दाईं ओर हाथी और बाघ हैं। बाईं तरफ गेंडा और भैंसा हैं। इसके आसन के नीचे दो हिरण आमने-सामने खड़े हैं और गरदन घुमाकर पीछे की तरफ देख रहे हैं। हिंस्र और शाकाहारी सभी वन्य पशु इस देवता के वश में थे। इस तावीज को पहनने में यह भावना भी रही होगी कि जंगल के सभी जानवरों से महिष-मुंड देवता उनकी रक्षा करता रहे।

मोहेंजो-दड़ो की इस मुद्रा छाप में सात पशु हैं। बीच में एक मगर है। उसके दोनों तरफ तीन-तीन पशु हैं। दाई तरफ बैल, बाघ और एकशृंग हैं। बाईं तरफ बैल, गेंडा और हाथी हैं। इस पशु-समुदाय में मगर के कुछ अंग दोनों ओर के पशुओं के भिन्न-भिन्न अंगों का काम भी देते हैं। हां, गेंडे का कोई भी अंग मगर के अंग के साथ नहीं मिला है। सिंधुवासी संकटों से बचने के लिए इसे तावीज के रूप में धारण करते थे।

एक मुद्रा के एक पहलू पर सिंधुवासियों के देवद्रुम शमी वृक्ष का संरक्षक यक्ष बाघ को भगा रहा है। बाघ देवद्रुम की शाखा चुराने आया था। दूसरे पहलू पर एकशृंग, हाथी और गेंडा चलते दिखाए गये हैं। संभवत: ये देवद्रुम का अभिवादन करने जा रहे है। पशुओं की पंक्ति में एकशृंग सब के आगे चल रहा है। सिंधुवासियों का यह सर्वश्रेष्ठ, काल्पनिक, दिव्य पशु था। संकटों से बचने के लिए यह तावीज पहना जाता था। भारत और नेपाल में यह मंगलकारी पशु समझा जाता रहा है। संस्कृत शाहित्य में तथा आदिवासियों में उसके साथ अनेक प्रकार के विचित्र विश्वास जुड़े हैं। लहोटा नागा गेंडे की हड्डी का एक टुकड़ा अपने खेतों के पास इस विश्वास से गाड़ देते हैं कि उनकी फसलें अच्छी उगेंगी।

मोटी खाल का रहस्य

एक रोचक कथा है। महाभारत के युद्ध के लिए भगवान् कृष्ण नई-नई तकनीकों को अपनाने पर विचार कर रहे थे। उन्होंने युद्ध में गेंडे को हाथी की जगह देने की सोची। उनकी दलील थी कि हाथी जरूरत से अधिज ऊंचा जानवर है और उसकी पीठ पर बैठकर लड़ने वाले को शत्रु आसानी से निशाना बना लेता है। उनकी आज्ञा से एक गेंडे के शरीर पर कवच चढ़ाकर उसे युद्ध के लिए प्रशिक्षित करना शुरू किया गया। कुछ समय बाद उसे स्वामी के सामने उपस्थित किया गया। श्रीकृष्ण ने पूछा कि इसका सवार और होदा कहां है ?

उस्ताद ने उत्तर दिया कि महाराज यह ढीठ और एकदम जंगली पशु है, कुछ भी तो नहीं सीखता। यह अपने मालिक को कभी नहीं जिता सकता।

आखिर, भगवान् कृष्ण ने गेंडे को जंगल में छोड़ने का आदेश दे दिया। वहां जाते ही वह जड़-बुद्धि भूल गया कि उसके शरीर पर लोहे का कवच बंधा है। वह कवच जिंदगी भर उसके शरीर पर लिपटा रहा और मरते समय वह उसे अपनी संतान को विरासत में दे गया। कहते हैं वही कवच कड़ी खाल बन गया और तभी से गेंडे की खाल मजबूत बन गई। मलय के आदिवासी गेंडे को निरा जंगली पशु नहीं मानते। वे इसे अलौकिक शक्ति का पुंज समझते हैं। इसी कारण वे इसे देवीय शक्तियों का मूर्त्तरूप समझकर आदर से देखते हैं (मलय मॅजिक, वाटर विलियम स्कीट, 1900, पृष्ठ 150)।

युद्ध-सामग्री के लिए

लोक-कथाओं के अनुसार समर-विद्या के विशारद श्रीकृष्ण ने भले ही इसे युद्ध के लिए उपयुक्त जानवर नहीं पाया, परंतु इतिहास और पुरातत्व साक्षी हैं कि युद्ध-लोलुप मनुष्य को आदिम युग से ही अपनी रक्षा के लिए मजबूत ढाल की आवश्यकता थी; वह उसे गेंडे की खाल से प्राप्त करता था। गेंडे के कंधों के ऊपर चारों जोड़ों पर मोटी खाल की जो तहें होती हैं वे ढाल बनाने के लिए उपयुक्त होती हैं। नेपाल में मोटी खाल की इन चार तहों को भी ढाल कहते हैं। एक गेंडे की खाल से बढ़िया ढालें तो चार ही बनती हैं, कंधे की खाल के अलावा दूसरी खाल भी ढाल बनाने के काम में ले ली जाती है। तलवार की मूठें और बंदूक में बारूद भरने की छड़ें (ram rods) इस खाल से बनाई जाती थीं। नेपालियों की खुखरी तथा हथियारों की मूठें गेंडे के सींग से बनाई जाती थीं। 1416 के एक चीनी वर्णन में बताया गया है कि जावा निवासियों के खंजरों के हत्थे सोने के या गेंडे के सींग से बनाये जाते थे।

पहले जमाने में भारत के कुछ राजा युद्ध में गेंडों को मोर्चे की अगली रक्षक-पंक्ति में रखते थे जो दुश्मन के हमलों को रोकने में आधुनिक टैंकों के समान उपयोगी होते थे। उनके सींग के ऊपर लोहे के त्रिशूल (tridents) बांध दिये जाते थे। मौका पड़ने पर त्रिशूल का उपयोग करने के लिए उन्हें सधाया जाता था।

1515 में पुर्तगाल के राजा इमैनुअल की सवारी के आगे गेंडा चलता था जो गुजरात के एक राजा द्वारा भेंट किया गया था। उसकी कीमत दो लाख डोबराज (करीब तीन लाख पौंड) थी। इस ऐतिहासिक अभिलेख से पता चलता है कि भारतीय गेंडा किस हद तक पालतू और वशवर्ती बनाया जा सकता है। हर साल 26 जनवरी को घूमधाम से मनाये जाने वाले गणतंत्र दिवस के भव्य समारोह में सधाये हुए हाथियों को परेड की झांकियों के आगे रखते हैं, गेंडे को भी शामिल कर लें तो समारोह का आकर्षण बढ़ जाए।

ऐबिहासिक साक्ष्यों से भी ज्ञात होता है कि भारत में गेंडा दूर-दूर तक फैला हुआ था और बहुत-से स्थानों में पाया जाता था। लगभग सारे उत्तर भारत में मिल जाता था। पश्चिम में पेशावर (अब पाकिस्तान) से लेकर पूर्व में सादिया (असम) तक और दक्षिण भारत में भी मिल जाता था।

गेंडे कम क्यों हो गये ?

गेंडा घास के मैदानों, दलदलों, पहाड़ियों तथा संकरी खाड़ियों (creeks) में बिचरा करता था।

गेंडे का आवास खुला और घास वाली दलदली भूमि होती है। ये धान की खेती के लिए उपयुक्त होती है। इन्हें हस्तगत करने के लिए किसान सदा यत्नशील रहते हैं। काजीरंगा नेशनल पार्क के नजदीक रहने वाले

लोग अधिकतर किसान हैं। पार्क से बाहर निकलकर गेंडे उनके खेतों को चर जाते हैं। आम किसान उसे घुसपैठिया और अवांछित जानवर समझता है। उसके प्रति खेतीहर की कोई हमदर्दी नहीं होती। कानून के शिकंजे में जकड़े जाने के भय से वह सामान्यतः उसे जान से नहीं मारता। हां, अपनी खेती के दुश्मन को मारने वाले पोचरों के क्रियाकलापों से उसे हमदर्दी होती है।

वन्य जीवों के प्रेमियों को गेंडे के संरक्षण के लिए किसानों और अन्य प्रभावशाली लोगों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए। कानूनी संरक्षण के साथ आम जनता का संरक्षण प्राप्त करना अधिक प्रभावकारी सिद्ध होगा।

मनुष्य की बढ़ती हुई आबादी को बसाने के लिए, बड़े उद्योगों तथा कारखानों को स्थापित करने के लिए, खेती योग्य भूमि का विस्तार करने के लिए और चरागाहों के लिए गेंडे के आवासों को साफ कर भूमि हासिल करना और लगातार निर्ममता से इसका शिकार इसकी घटती संख्या की वजह है। अपने घरों से खदेड़े हुए गेंडों को असम, उत्तरी बंगाल और नेपाल में सिमटना पड़ा।

उन्नीसवीं सदी के मध्य तक असम में सभी जगह गेंडे पाये जाते थे। लेफ्टिनेंट कर्नल पोल्लोक इंजीनियर था और असम में सड़कें बनाने की योजना का अध्यक्ष था। वह जहां भी गया उसे गेंडे और दूसरे बड़े जानवर बहुतायत में मिले और उसने उनका शिकार किया था। सैंडरसन ने भारत में हाथियों को पकड़ने के अनेक खेदे किये थे। उसने बंगाल के मैमनसिंह जिले की बगल में, गारो पहाड़ियों में एक सींग वाला गेंडा देखा था। असम में ब्रह्मपुत्र की घाटी उन्नीसवीं सदी तक मुख्य रूप से घनी घास और जंगलों से भरी थी। दूरंदेशी उद्योगपतियों को यहां चाय के बगीचों के लिए उपयुक्त भूमि नजर आई। इस इलाके में चाय-उद्योग के पनपने के साथ-साथ जंगलों का बहुत अधिक सफाया कर दिया गया। जंगली जानवर धीरे-धीरे कम होते गये जिसमें गेंडे को शिकारियों ने चोरी-छिपे खूब मारा। ब्रह्मपुत्र की घाटी में तो थोड़े-बहुत गेंडे बच भी गये परन्तु गंगा की घाटी में यह पशु उन्नसवीं शताब्दी में ही लुप्त हो गया था। 1900 तक यह केवल दक्षिणी नेपाल, उत्तरी बिहार, उत्तरी बंगाल और असम में सीमित रह गया था। जीवन संघर्ष में जैसे दूसरे भारी-भरकम शरीर वाले, दैत्याकार जीव अपना अस्तित्व बनाये रखने में सफल नहीं रहे उसी तरह यह भी प्राकृतिक दुश्मनों से और तेजी से बदलती हुई परिस्थितियों में अपनी रक्षा न कर सका। इसकी देखने की शक्ति कम होती है। इसलिए आसानी से शिकारियों का निशाना बन जाता है। यह मंदबुद्धि है। इसमें सूझबूझ का अभाव होता है। जब तक खतरा सिर पर न आ जाय, यह बुद्धुओं की तरह चरता रहता है। खतरा आ जाने पर भी भागने के बजाय यह उलटकर हमला कर बैठता है। यह निश्चित ठिकानों पर मल विसर्जन करता है। इसकी लीद के बड़े ढेरों को देखकर शिकारी उनके पास छिपकर बैठ जाते हैं और गेंडों के आने की प्रतीक्षा करते हैं। इस पशु की आदत है कि लीद करने के स्थान पर यह पीठ की ओर से पहुंचता है। जब यह उलटी चाल से बेखबर जा रहा होता है तब शिकारी उसे मार गिराते हैं।

चमत्कारी गुणों के कारण जिन देशों के लोग ऊंचे दामों पर गेंडे का सींग खरीदते हैं, वहां प्रचार किया जाना चाहिए कि तथाकथित गुणों की मान्यता विज्ञान सम्मत नहीं है। वास्तविकता मालूम हो जाने से सींग खरीदने के प्रति लोगों का रुझान खत्म हो जागया। इससे अवैध शिकारी हतोत्साहित होंगे और गेंडों का अवैध शिकार रुक सकेगा।

राजाओं का प्रिय शौक

शिकार खेलना राजाओं का प्रिय शौक रहा है। जीवन के क्रिया-कलापों में शिकार का महत्वपूर्ण स्थान था। शिकार में तेजी से दौड़ते हुए लक्ष्य को बींधने का अभ्यास हो जाता है। जीव-जन्तुओं के भय, क्रोध आदि भावों की पहचान हो जाती है।

परिश्रम करने से शरीर भली प्रकार गठ जाता है। गेंडे का शिकार बहादुरी का काम समझा जाता था। रघुवंशीय राजाओं का जीवन वृत्तांत लिखते हुए कालिदास (चौथी शती ईस्वी) ने राजा दशरथ द्वारा गेंडों का शिकार किये जाने का उल्लेख किया है।

दशरथ ने बाण से सींग काट दिये

बसंत का मौसम आने पर दशरथ का मन शिकार खेलने को हुआ। पशुओं से व्याप्त वन की ओर वे अयोध्या से निकल पड़े। अपने सामने पड़ने वाले सभी गेंडों के सींगों को उन्होंने तेज धार वाले क्षुरप्र से काटकर उनके सिर के बोझ को हलका कर दिया। दशरथ ने उन्हें जान से नहीं मारा। राजा का अभिमानी मन केवल यही चाहता था कि उसके सामने कोई ऊंचा मस्तक उठा कर न चले। इसी उद्देश्य से उन्होंने गेंडे के अकड़कर चलने के साधन सींग को ही काटा था, राजा को उनके प्राणों से वैर न था :

प्रायो विषाणपरिमोक्षलघूत्तमाङ्गान्खड्गांश्चकार नृपतिर्निशितैः क्षुरप्रैः।
शृङ्गं च दृप्तविनयाधिकृतः परेषामत्युच्छ्रितं न ममृषे न तु दीर्घमायुः॥

रघुवंश, सर्ग 9; 62.

तलवार से शिकार

इस उदाहरण में गेंडे का शिकार करने का साधन फेंककर वार करने वाला अस्त्र क्षुरप्र था। लेकिन, गुप्तवंश के राजा इस शिकार में तलवार का प्रयोग करते थे। गुप्तकालीन सोने के एक सिक्के पर खड्ग निहंता कुमारगुप्त प्रथम (414-455 ईस्वी) को गेंडे का शिकार करते हुए अंकित किया गया है। मृगया के इस प्रभावशाली अंकन में महाराजा नंगे बदन एक चुस्त घोड़े की नंगी पीठ पर बैठे हैं। वेग से भगाकर उन्होंने घोड़े को हमलावर गेंडे के सामने ही लाकर खड़ा कर दिया है और उसे तलवार से ललकार रहे हैं। सिक्के पर 'भर्ता खड्गत्राता कुमारगुप्तो जयत्यनिशं' का श्लेषात्मक लेख है।

पत्थर के कांटेदार भाले से शिकार

मिर्जापुर क्षेत्र में विजयगढ़ दुर्ग के समीप स्थित घोड़मंगर गुफा में गेरू-रंग से पूरक शैली में गेंडे के शिकार का एक महत्वपूर्ण दृश्य अंकित किया गया है। इस चित्र में गेंडे का रूप-विन्यास एवं आपूरण शैली, आखेटकों की आघात मुद्राएं तथा थूंथनी के प्रहार से ऊपर उछले निरस्त्र आदमी की स्थिति विशेष ध्यान आकृष्ट करती है। आखेट दृश्यों में यह अद्वितीय है।

मिर्जापुर क्षेत्र में विजयगढ़ की 'हिरनी-हिरना' नामक गुफा में अंकित गेंडे के शिकार का दृश्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें छह आदमी कांटेदार भालों से गेंडे का आखेट करते हुए दिखाये गये हैं। चित्र में अंकित भालों का कई दृष्टियों से बड़ा महत्व है। एक तो यह कि ये धातु के न होकर पत्थर या लकड़ी के बने हैं। दूसरे, हमें यह ज्ञात होता है कि उस काल में मनुष्य भालों के द्वारा ही इतने विशालकाय जानवरों का शिकार कर लेता था। यह चित्र कम से कम नवीन प्रस्तर युग का है जिसका अर्थ है कि कई हजार साल पुराना है। भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से चित्र बड़ा आकर्षक है। भालों से प्रहार करने वाले पांचों व्यक्तियों की आक्रामक-मुद्राएं अलग-अलग हैं तथा सबसे सफल चित्रण छठे व्यक्ति का है जिसे गेंडे ने सींग से ऊपर उछाल दिया प्रतीत होता है।

मुग़लों और अंग्रेजों के शासन में

बहादुरी का प्रदर्शन करने के लिए क्षत्रियों, राजाओं और शासकों द्वारा गेंडे के शिकार का यह सिलसिला चलता रहा। मुग़ल काल में इसके अनेक उदाहरण मिल जाते हैं।

1387 में शिवालिक और दून घाटी में आखेट के लिए जब फिरोजशाह आया तब उत्तराखण्ड के इस भाग में यह प्राणी मिल जाता था। आक्रमण के दौरान तैमूर ने कश्मीर के पास 1398 में कई गेंडों का शिकार किया था।

बाबर के संस्मरणों से पता चलता है कि सिंधु घाटी में झाड़ियों से भरी धरती पर उसने 1519 में गेंडे का शिकार किया था।

अकबर के जीवन वृत्तांत आईन-ए-अकबरी में अबुल फ़ज़ल ने इस प्राणी के शरीर की बनावट तथा इसकी आदतों का सही वर्णन किया है। वे लिखते हैं कि घोड़े की पीठ पर सवार आदमी के ऊपर भी यह हमला कर देता है। इसकी खाल को तीर नहीं बींध सकता। यह इतनी मजबूत होती है कि इससे छाती की रक्षा के लिए कवच, ढालें तथा इसी प्रकार की अन्य चीजें बनाई जाती हैं। बादशाह अकबर ने घोड़े पर सवार होकर इस अजीब जानवर का पीछा किया होगा। कहा जाता है कि अकबर के जमाने में गेंडा दिल्ली के आसपास मिल जाता था।

उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक यह उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र, रुहेलखण्ड और बंगाल में गंगा की घाटी में पाया जाता था। 1870 के दशक में यह उत्तर प्रदेश के लखीमपुर-खीरी जिले में पीलीभीत के जंगलों में मिल जाता था। उन्नीसवीं सदी के शुरू में कलकत्ता की अलीपुर बस्ती में जंगली गेंडे घूमा करते थे।

राजा ने दो सौ गेंडे मार दिये

अंग्रेजों के शासन काल में इस आखेट में खूब वृद्धि हुई। तत्कालीन रियासतों के नरेशों ने अपनी बहादुरी के कारनामे प्रकट करते हुए बताया है कि किस प्रकार उन्होंने सैकड़ों गेंडों की निर्मम हत्यायें कर दीं।

1876 की ओरिएंटल स्पोर्टिंग मैगजीन में अभिलिखित है कि बंगाल में एक शिकारी ने एक दिन में गेंडों पर 100 गोलियां चलाई थीं। इनमें छह गेंडे मारे गये और 25 जख्मी हुए। 1871 और 1907 के बीच कूच बिहार के महाराजा ने पश्चिम बंगाल और असम में 200 गेंडे मारे थे। कर्नल फित्जविलियम थॉमस पोल्लोक ने मोटी खाल वाले इन जानवरों को मारने का बीड़ा उठा लिया था। उसने कहा था कि पता नहीं मैं क्यों ऐसा कर रहा हूं? नेपाल के राणा ने एक महीने में 97 गेंडों का शिकार किया था।

अखाड़े में जुझारू गेंडे

बड़ोदरा के महाराजा जंगली जानवरों को लड़ाकर मनोरंजन किया करते थे। लड़ाई के अखाड़े को ऊंची दीवार से घेरा हुआ था। यह इतनी ऊंची थी कि लड़ने वाले तेंदुए जैसे जानवर उसके ऊपर नहीं पहुंच सकते थे। यहां बैठे दर्शक सुरक्षित रहते थे।

अखाड़े के एक तरफ ऊंचा चबूतरा था। उसकी बाजू में बनी सीढ़ियों से चढ़कर ऊपर जाते थे। यहां विशिष्ट मेहमान तथा रियासत के बड़े अफसर बैठते थे। इस अखाड़े में गेंडों की एक लड़ाई का वृत्तांत उन्नीसवीं सदी के अंत में लंदन के एक अखबार में छपा था।

अखाड़े के दोनों छोरों पर गेंडों को जजीरों से बांध रखा था। शक्ल सूरत और डील-डौल में दोनों एक जैसे थे: इनकी पहिचान के लिए एक को काला और दूसरे को लाल रंग से पेंट कर दिया गया था। गेंडों की लड़ाई देखने के लिए दर्शक जमा हो गये थे। उन्होंने काले गेंडे के नाम कालू और लाल का नाम लालू रख दिया था।

मोटी दुर्भेद्य खाल का कवच ओड़े हुए दोनों जानवरों को खोल दिया। गुस्से में चीखें मारते हुए, बेढंगी-सी ढुलकी चाल में उन्होंने चक्कर लगाना शुरू किया। मालूम पड़ता था कि उनकी दृष्टि बहुत मंद थी या खराब थी क्योंकि, वे अनेक बार एक-दूसरे के पास से गुजरे, लेकिन रुके नहीं:

जानवरों को लड़ाई के लिए प्रशिक्षित करने वाले उस्ताद उनकी हरकतों को गौर कर रहे थे। वे कालू और लालू को जूझने के लिए उकसा रहे थे। आखिर, वे भिड़ गये। उन्होंने सींगों द्वारा एक-दूसरे पर जर्बदस्त हमला कर दिया। अपने बचाव के लिए वे सींगों को तलवार के रूप में इस्तेमाल कर रहे थे। लालू ने कालू के सिर के नीचे सींग से वार करने की कोशिश की। गेंडो का यह मर्मस्थल होता है। ऐसी खतरनाक हालत की नौबत आने से पहले ही कालू सहसा घूम गया। दुश्नन का सींग वहां गड़ जाता तो गरदन को बींधता हुआ सांस की नली और अन्न प्रणाली में घुस जाता।

जोर आजमाइस करते हुए गेंडे कुछ मिनट तक एक ही स्थिति में स्थिर बने रहे। फिर उनमें से एक भाग खड़ा हुआ। अखाड़े में तेजी से चक्कर लगाने लगा। उसका हौसल बढ़ाने के लिए कुतूहल भरे दर्शक सीटियां बजाकर और शोर मचाकर इसे उकसाने लगे। पूरे जोश के साथ वह फिर हमलावर से भिड़ गया।

जोश-खरोष के साथ वे बार-बार भिड़ते अलग होते और दम लेकर नये उत्साह के साथ अधिक सशक्त हमला करते। पूरे एक घंटे तक पशुबल का यह ड्रामा दर्शक देखते रहे। उनके सींगों की टक्कर का शोर बादलों में कड़कती हुई बिजली के समान था। सींगों की जोरदार टक्कर के शोर के साथ ऊंचे चबूतरे पर खड़े संभ्रांत दर्शक भी आवेश में उछलते, चिल्ला-चिल्लाकर शाबाशी देते।

जुझारू गेंडों के बड़े होंठ झाग से भर गये थे। उनके माथे लहू से सन गये थे। उन्हें तरोताजा रखने के लिए और द्वंद्व युद्ध जारी रखने के लिए उनके गिर्द खड़े परिचारक उन पर बाल्टियों से पानी फेंक रहे थे। पशुबल के इस विलक्षण युद्ध से महाराजा के मेहमानों का अच्छा खासा मनोरंजन हो गया था। गायकवाड़ ने उसे रोक देने का हुक्म दिया। उन्हें अलग किया गया। बांधकर जखमों को साफ किया गया। ठिकानों पर ले जाकर उनके पसन्द की पौष्टिक खुराक उनकी खुरलियों में डाल दी।

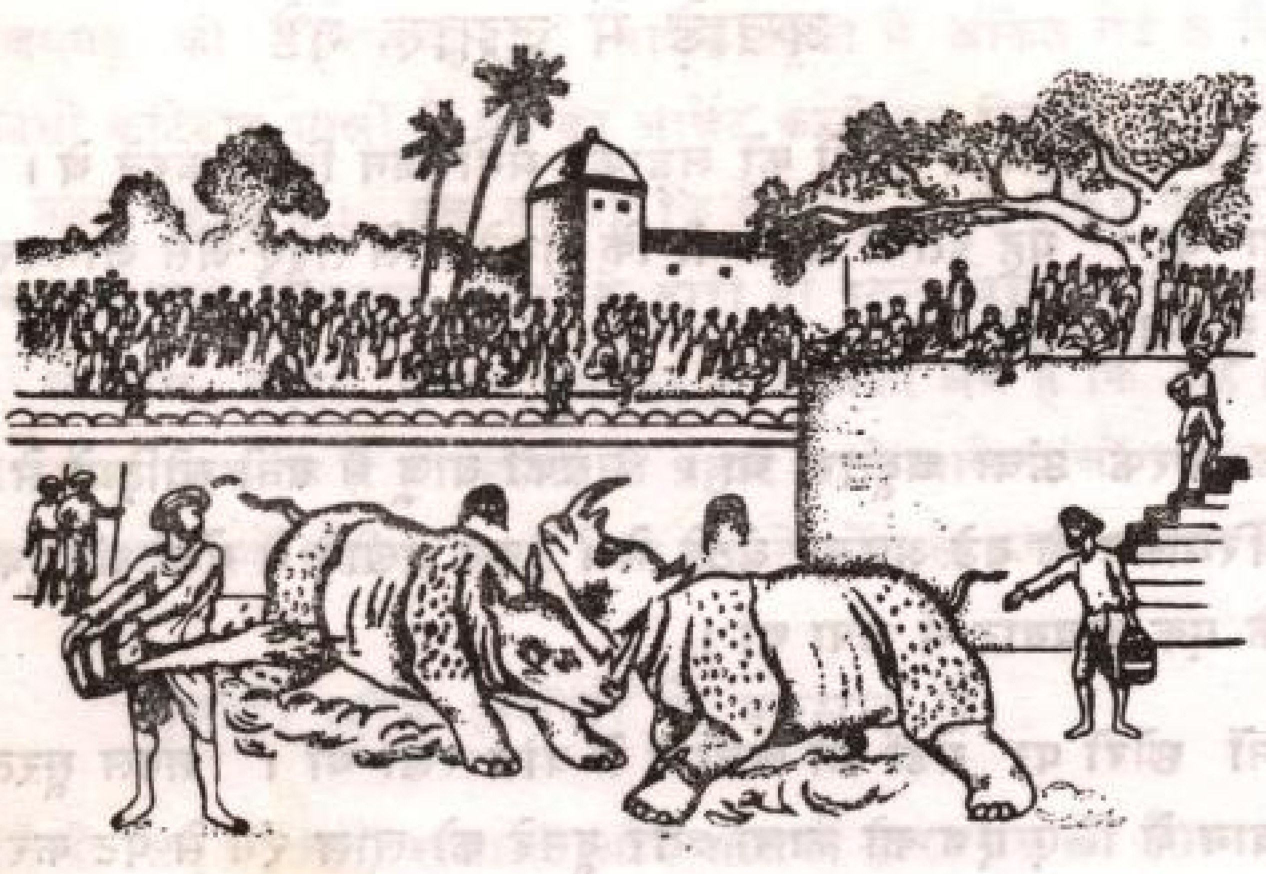

अखाड़े में जुझारू दो सींग वाले गेंडे

अखाड़े में जुझारू एक सींग वाले भारतीय गेंडे

लंदन के अखबार में गेंडों की इस लड़ाई का स्केच छपा है। इसमें दो सींग वाले गेंडे हैं। बडोदरा नरेश ने ये अफ्रीका से मंगाये होंगे। 1876 में प्रिंस आॅफ वेल्स भारत की यात्रा पर आये थे। उनके मनोरंजन के लिए महाराजा ने जो गेंडे की लड़ाई का प्रदर्शन किया था उसमें एक सींग वाले भारतीय गेंडे थे।

द इलस्ट्रेटेड लण्डन न्यूज में इनकी लड़ाई का स्केच छपा है। विशिष्ट मेहमानों के साथ बालकनी से प्रिंस आॅफ वेल्स इन आदिकालीन पशुओं की दिलचस्प टक्कर देख रहे हैं। गौर करने की बात यह है कि भारतीय एकशृंगी गेंडे जंगलों की प्राकृतिक अवस्थाओं में अपनी मजबूत दतलियों के वार से दुस्मन को फट्टड़ करते हुए देखे जाते हैं। इनका सींग लड़ाई का साधन नहीं होता। यह अधिचर्मीय होता है। आघात से उखड़ जाता है।

लेकिन छपे हुए स्केच में प्राणियों की टक्कर में, सींग आपस में भिड़े हुए हैं। चेहरे एक-दूसरे से सटे हैं। जुझारू गेंडों की अगली दोनों टांगों में लोहे की ढीली जंजीरें बंधी हैं। इससे उनकी गतिविधियां सीमित हो गई हैं। योद्धाओं के पीछे और बगल में खड़े उनके प्रशिक्षक उन्हें भिड़ने के लिए उकसा रहे हैं। भाले कोंच कर भी वे उन्हें उत्तेजित कर रहे हैं।

द ग्रैफिक, अगस्त 1884 के अंक में द डयूक ऑफ पोर्टलेंड, अर्ल दे ग्रे, लॉर्ड बेंगलौक और लॉर्ड चार्ल्स बेरेस्फीर्ड के नेपाल में शिकार-दौरे के स्केच छपे थे। एक स्केच में लॉर्ड चार्ल्स बेरेस्फोर्ड उस गेंडे के सिर पर बैठे हैं जिसे उन्होंने शिकार में मारा था। एक चित्र में खाल उतारने वाले नेपाली गेंडों के सिर के साथ दिखाए हैं।

हांके में 375 हाथी

ब्रिटेन की महारानी एलिजाबेथ फरवरी 1961 में जब भारत की राजकीय यात्रा पर आई थीं तब उनके पति डयूक ने नेपाल की तराई के दक्षिण-पश्चिम में स्थित मघौली स्थान पर एक मादा शेर और एक मादा गेंडा का शिकार किया था। मृगया की साहसपूर्ण भारतीय परम्परा से यह शिकार सर्वथा भिन्न था।

गुप्तकालीन राजा घोड़े की पीठ पर बैठकर अपनी तलवार के भरोसे अकेले ही इस भयंकर पशु से जूझते थे। यहां शिकारी दल तथा उनके साथ आये सभी महत्वपूर्ण अभ्यागतों ने सधे हुए हाथियों की पीठ पर. शिकारों हौदों में आश्रय लिया था। हांका करने वाले लोग आमतौर पर पैदल चलते हैं, परन्तु यहां वे भी हाथियों की पीठ पर सवार थे। 375 हाथियों ने इस हांके में भाग लिया। 1.80 मीटर ऊंची घास के वन को उन्होंने चारों ओर से घेर लिया। हांके में पहले शेरनी बाहर निकली जिसका एक ही गोली से काम-तमाम कर दिया गया। उसके बाद पास के जंगल से गेंडे को हांका गया। इसे बाहर निकालने में तीन घंटे तक खोज जारी रही थी। यह भी एक मादा गेंडा निकली। शिकारी दल के सामने आने पर दो गोलियों से वह मार गिरा दी गई।

एक हजार पौंड जुर्माना

यह एक सामान्य विश्वास रहा है कि गेंडे की 1.87 सेंटीमीटर मोटी खाल को गोली नहीं छेद सकती। इसकी सच्चाई को परखने के लिए एक बार एक आइरिश सिपाही ने पकड़े हुए एक गेंडे पर अपनी राइफल से निशाना साधा। घोड़ा खींचने के साथ ही उसने देखा कि गेंडा ढेर हो गया है। सिपाही के प्राण खुश्क हो गये, इस अविवेकपूर्ण कार्य के लिए उसे 1,000 पोंड की रकम भरनी पड़ी थी। गोली से मारे जाने पर यह धरती पर ऐसे गिरता है मानो घुटने मोड़कर बैठा हो। मरने के बाद भी यह इसी आसन में बैठा रहता है।

गेंडे का मर्मस्थल कनपटी है। आजकल के शिकारी कनपटी को ही लक्ष्य करके गोली चलाते हैं। 500 बोर से ऊपर हाई विलोसिटी की कोई भी राइफल गेंडे के शिकार के लिए उपयुक्त समझी जाती है। पहले जमाने में जब तलवार या भाले से गेंडे का शिकार किया जाता था तब कंधे की ढाल के नीचे वार करते थे जहां खाल नरम होती है। भागते समय ढाल की ये तहें खुलती हैं तब शस्त्र से वार किया जाता था।

पकड़ना—जोखिम भरा साहसो काम

गेंडे को पकड़ना सचमुच बहुत कठिन काम है। इसमें वन अधिकारियों को बड़े जोखिम का सामना करना पड़ता है। उनके आने-जाने के स्थानों पर 2 70 मीटर लम्बे, 1 50 मीटर चौड़े और 1 80 मीटर गहरे गड्ढे खोदे जाते हैं। वनों में जगह-जगह पड़े हुए लीद के ढेरों के आस-पास गढ़डे खोदना अधिक कारगर समझा जाता है। इन्हें घास-पात से इस तरह ढक दिया जाता है कि पशु को पता न चले। इनमें किसी भी समय गेंडा गिर सकता है। वन अधिकारियों की राय में रात्रि के समय गिरे तो अच्छा रहता है। हाथियों की खेदा पद्धति के समान यहां गेंडों को घेरकर इधर हांका नहीं जाता।

सीधा-सादा गेंडा जो शांत भाव से घास के कोमल अंकुरों को निश्चिंतता से चरता रहता है, गढ्डे में गिरते ही एक भयंकर जीव बन जाता है। यह तुरन्त अपनी थूंथनी से गड्ढे की दीवार की मिट्टी को खोदना शुरू करता है। कई जगहों पर मिट्टी नरम और गीली होती है। इसे खोदकर वह कभी-कभी गढ्डे से बाहर निकलता हुआ भी देखा गया है।

क्रोध और पशुबल का मूर्त्त रूप

गढ्डें में गेंडे के गिरने की खबर मिलते ही पकड़ने वाला दल रस्से, फावड़े, टोकरियां, पिंजरा आदि आवश्यक सामान लेकर वहां पहुंच जाता है। उन्हें देखते ही वह क्रोध में ललकारता है। परन्तु वहां इसकी परवाह करने वाला कोई नहीं होता। सावधानी से नजदीक पहुंचते हुए वन-कर्मचारी मोटे और मजबूत रस्सों के फंदों को उसके शरीर पर फेंकना शुरू करते हैं। सबसे पहले उसकी बलशाली गरदन को वश में करना होता है। गरदन को जकड़ लेने के बाद अगला काम आसान हो जाता है। उसी तरह फंदे फेंककर गेंडे को सात-आठ जगह से बांध लिया जाता है। रस्सों के दूसरे सिरे आसपास के पेड़ों से बांध दिये जाते हैं। इतने बंधनों में जकड़ा जाने के बावजूद भी वह छुटकारा पाने के अपने प्रयासों में जरा भी ढील नहीं करता। उस समय वह क्रोध और पशुबल का मूर्त्त रूप बना होता है। हुंकार के साथ पास आने वालों पर झपट उठता है।

बाँधने का काम पूरा हो चुकने पर गढ्डे के एक ओर से मिट्टी हटाकर नाली खोदी जाती है। गढडे की दीवार जब 60 सेंटीमीटर रह आती है तब रस्सों के सहारे नाली के अंतिम सिरे तक एक पिंजरा सरकाया जाता है। इसके खुले दरवाजों का मुख गड्डे की दीवार से सटाकर रखा जाता है। अगला काम अधिक जोखिम का है। कुछ सधे हुए कर्मचारी 60 सेंटीमीटर मोटी दीवार को कस्सियों से काटकर पतला करना शुरू करते हैं। इन्हें अपने बिलकुल पास देखकर मुंह से झाग निकालता हुआ बंदी उन पर बार-बार झपटता है। यह विशाल बुद्धिहीन दानव उस समय छूट जाय तो खैर नहीं।

जब दीवार लगभग 15 सेंटीमीटर मोटी रह जाती है तब खुदाई का काम रोक देते हैं। जो रस्से बंदी पशु को इधर बढ़ने से रोक रहे थे उन्हें ढीला कर देते हैं। पिंजरे के पीछे खड़ा एक कर्मचारी सफेद कपड़े को हिला-कर पशु को भड़काने की कोशिश करता है। गुस्से में वह उस पर झपट पड़ता है। ऐसे एक दो हमलों में पतली दीवार टूट जाती है और गेंडा पिंजरे में दाखिल हो जाता है। दरवाजे गिरा दिये जाते हैं।

गड्ढे के अंदर ही दम तोड़ दिया

इस कशमकश में प्राणी का कई बार सींग टूट जाता है या कोई दूसरा अंग क्षतिग्रस्त हो जाता है। 1962 की जनवरी में पेरिस की जंतुशाला के लिए असम के आरक्षित जंगलों से जो गेंडी पकड़ी जा रही थी उसका यह प्राकृतिक शृंगार टूट गया था। तब असम सरकार को बाध्य होकर इस शूर्पणखा की पेरिस यात्रा रद्द कर देनी पड़ी थी। फिलेडेल्फिया की पशु-वाटिका की मांग के लिए पकड़े जाते हुए एक गेंडे ने स्वतन्त्र होने की कोशिश में गढ़डे के अन्दर ही दम तोड़ दिया था। इससे असम सरकार को इस मूल्यवान जीव से मिलने वाली भारी रकम की हानि उठानी पड़ी थी।

पशुओं का व्यापार करने वाले कुछ साहसी शिकारियों ने अफ्रीकी गेंडों को पकड़ने में अद्भुत शौर्य और सूझबूझ का परिचय दिया है। गड्ढे खोदे बिना ही वे गेंडों को सफलतापूर्वक पकड़ लेते हैं। जंगल से बाहर खुले मैदान में वे गेंडे का पीछा करते हैं। पकड़ने वाले लोग दो-तीन दलों में अलग-अलग बंटकर ट्रकों में सवार हो जाते हैं।

गेंडों को पकड़ने जाना एक आनंददायक यात्रा नहीं है। यह खतरे से भरा काम है। जब पकड़ने का कार्य शुरू होता है तब दल में प्रत्येक सदस्य के जिम्मे अपना-अपना काम होता है। अपनी रक्षा करना भी उनके अपने जिम्मे होता है। दल के सदस्यों को तब न तो फुर्सत होती है और न ही उनके लिए संभव होता है कि वे अपने साथी कैमरामैनों तथा दूसरे लोगों की चिंता कर सकें। इन लोगों को भी सभी विपत्तियों का सामना करने के लिए सन्नद्ध होकर जाना होता है।

पेट्रोल से स्नान

जिस ट्रकों में ये लोग सवार होते हैं वे खूब मजबूत बने होते हैं और लगभग 5 टन वजन के भारी रहते हैं। छोटे-मोटे ट्रक तो गेंडे के सींग की टक्कर से ही पलट जाते हैं। सींग की चोटों से ट्रक के पार्श्व छलनी हो जाते हैं। ऐसा लगता है कि तोपों से इन पर गोलियां दागी गई हैं। यह चोट अचानक ट्रक के मर्मस्थल पर लग जाय तो कई बार क्षति गंभीर होती है। एक बार एक ताजा पकड़ा हुआ गेंडा रस्सों से जकड़ा हुआ धरती पर पड़ा था। जिस लॉरी द्वारा उसे पकड़ा गया था वह पास में खड़ी थी। वायरलेस द्वारा पकड़ने का समाचार आधार-शिविर को भेज दिया गया था। वहां से वह ट्रक चल पड़ा था जिसमें गेंडे को लादा जाना था। रस्सों में कसा हुआ गेंडा मुक्त होने के लिए रह-रहकर जोर मारता रहा था। एक बार उसने ऐसा सींग मारा कि पास में खड़ी हुई लॉरी की पेट्रोल की टंकी बिंध गई। पेट्रोल की धार फूट पड़ी। लॉरी को हटाने से पहले ही गेंडे का सिर पेट्रोल से बुरी तरह नहा गया।

दानव का दर्प चूर करने वाले साहसी

अपने पीछे आते हुए ट्रकों को देखकर गेंडा बेतहाशा भागता है। ट्रक जब बिलकुल पास आ जाता है तब वह अपने मजबूत सींग से जोर का वार करता है। सींग की टक्करों से वह ट्रक को नष्ट कर देना चाहता है।

शिकारी दल के सदस्य मौका पाते ही रस्से के फंदे फेंकते हैं। गले में पहला फंदा पड़ने के बाद गेंडे के क्रोध की सीमा का अतिक्रमण हो जाता है। परंतु इससे उसकी निरंकुश गतिविधियों को वश में करने में सहायता मिलती है। ढाई सेंटीमीटर मोटा रस्सा 3,000 किलोग्राम वजनी बलशाली दानव के दर्प को चूर कर देता है। 20 मीटर लम्बे रस्से को धीरे-धीरे कसते जाते हैं। ट्रक की गति को भी क्रमशः कम करते रहते हैं। फिर ट्रक खड़ा कर लिया जाता है। युद्ध शुरू हो जाता है। गेंडा पीछे को हटता है। रस्सा तन जाता है। अपने भारी सिर को ऊपर और नीचे उठाकर वह झटके देता है। रस्सा इतना छोटा कर लिया जाता है कि गेंडा कम-से-कम ऊधम मचा सके। तब चार-पांच जवान झट ट्रक से कूद पड़ते हैं, पहले पशु की पिछली टांगों को और बाद में अगली टांगों को कसकर बांध देते हैं। यह सब कुछ मिनटों में ही कर लिया जाता है। तब ट्रक में लादने के उपक्रम शुरू होते हैं।

जंगल से पकड़ने के बाद गेंडे को दो महीने तक काजीरंगा पार्क, में एक घेरे में खुला रखा जाता है। इस बीच उसके प्राकृतिक आहार में धीरे-धीरे परिवर्तन किया जाता है। जंगल की टहनियों और घास के साथ-साथ उसे चोकर और खिचड़ी आदि अन्न भी देना शुरू करते हैं। दो महीने बाद उसे निर्दिष्ट स्थान में भेजते हैं।

आदेशपालक ढोर

नया पकड़ा गया गेंडा जंगलीपन और क्रोध दिखाता है। कुछ घंटे तक वह कठघरे या बाड़े की दीवारों पर चोट करता रहता हैं। इससे उसका सींग टूट सकता है और कान फट सकता है। कोई गेंडा ऐसा भी निकल आता है जो विरोधस्वरूप खाना ग्रहण नहीं करता। दो दिन तक यदि वह कुछ न खाये तो मर जाने से बचाने के लिए उसे मुक्त कर दिया जाता हैं।

पालक से प्रेम और सहानुभूति का बरताव मिलने पर उसका स्वभाव बदल जाता है। विश्वास प्राप्त कर लेने पर वह अपनी जीभ से पालक को उसी तरह प्रेम प्रदर्शन के लिए चाटता है जैसे कि गाय या भैंस अपने मालिक को चाटती है। चेन्नई के चिड़ियाघर के पालक से एक गेंडा इतना हिल गया था कि पुकारकर वह पालतू ढोर के समान विनम्रता से आ खड़ा होता था। पालक उसकी पीठ पर सवार होकर दर्शकों में कुतूहल जाग्रत करता था। उस गेंडे ने अपने को इतना विनम्र और एहसान-फरोश बना लिया था कि अपने पालक के अलावा दूसरे लोगों को भी सवारी करा देता था।

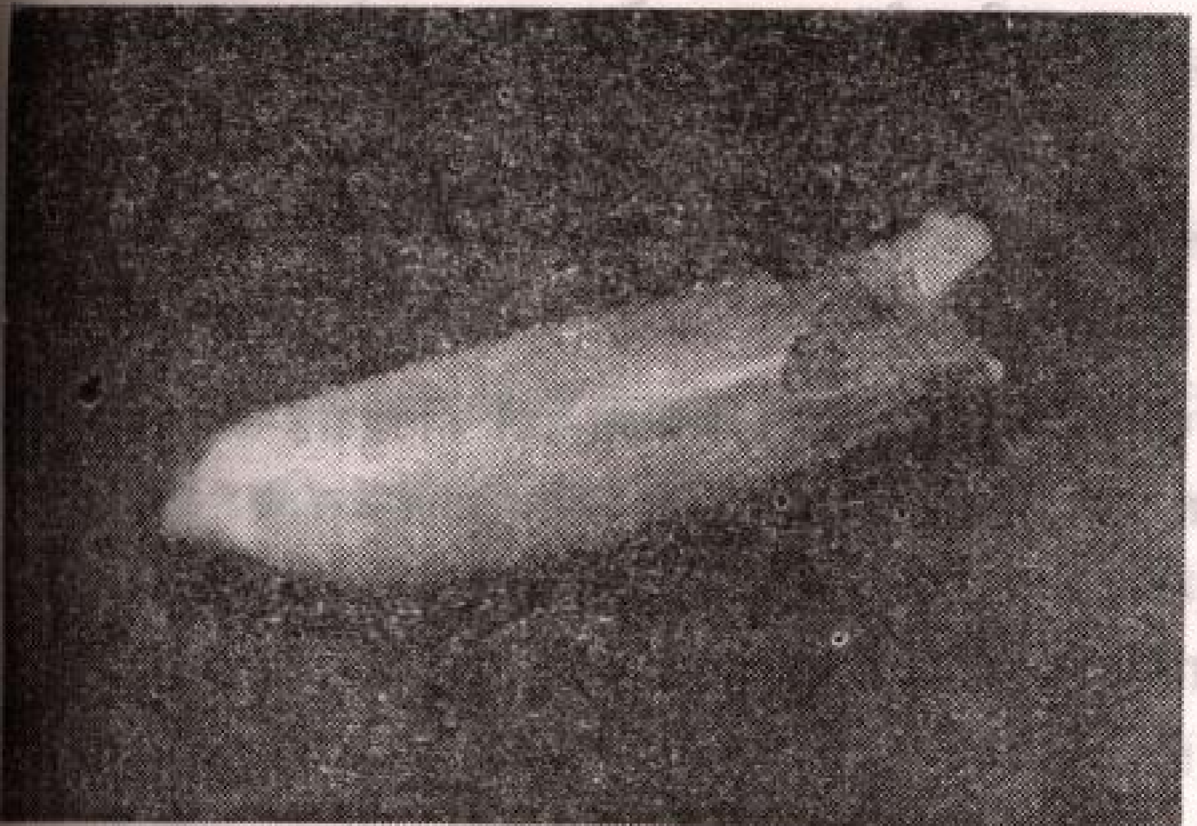

गेंडे का दांत

लौर्ड चार्ल्स बेरेस्फोल्ड शिकार किए हुए गेंडे के सिर पर बैठे हैं

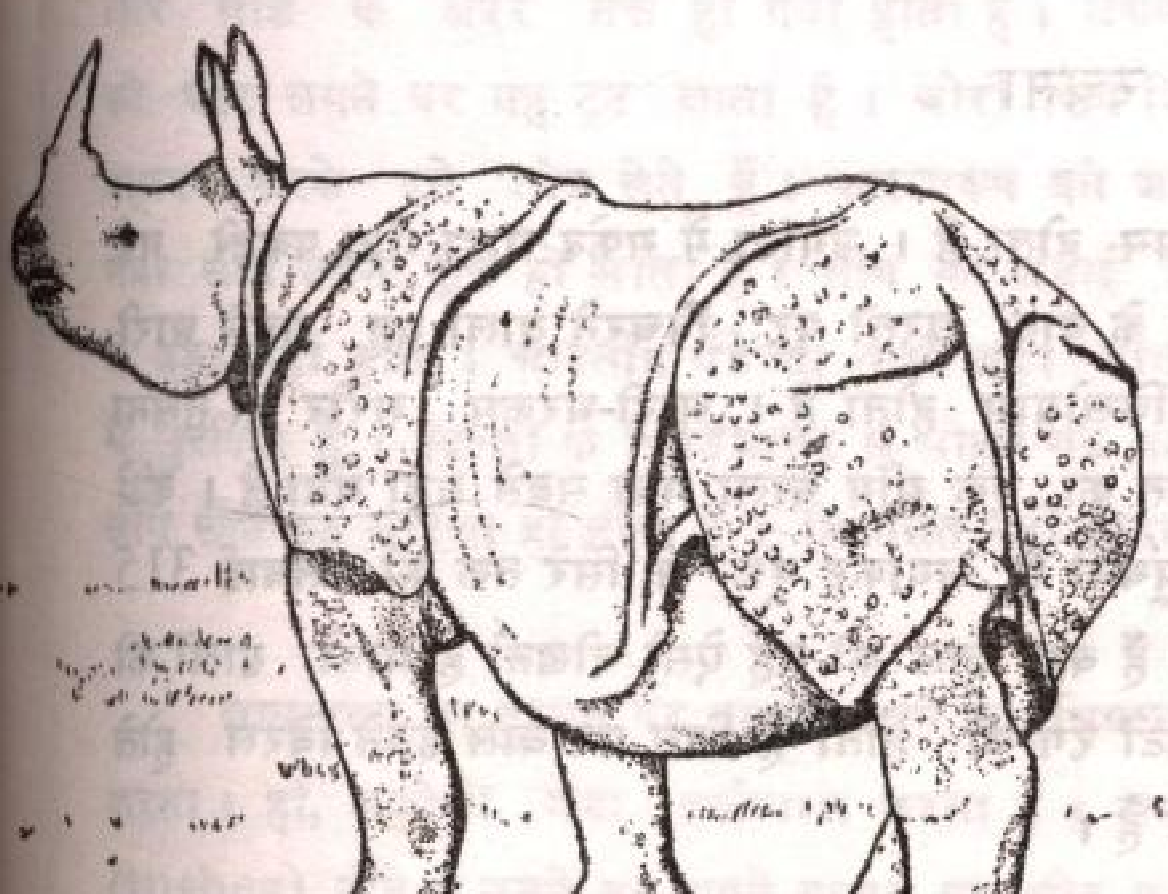

भारतीय गेंडे का स्वरूप

खाल उतारने वाले नेपाली गेंडों के सिर के साथ

चिड़ियाघरों में देखा गया है कि गेंडे का बच्चा जितनी कम उम्र से पाला गया है, वह उतना ही अच्छा पालतू बनता है। इस समय तो यह दुर्लभ प्राणी है परन्तु संरक्षण में रहता हुआ यदि वह अपनी संख्या को बढ़ा लेता है तो क्यों न इसे खेती-बाड़ी के कामों के लिए प्रशिक्षित किया जाय ? आखिर मनुष्य जड़-बुद्धि भैंसों से भी तो काम ले रहा है।

सिंधु घाटी की सभ्यता के लोग संभवतः गेंडे को पालकर रखते थे। मोहेंजो-दड़ो की खुदाई से प्राप्त अधिकांश सीलों पर गेंडा एक खुरली के पास खड़ा है। ठीक वैसी ही खुरली जैसी छोटे सींग वाले बैल के आगे है। सीलों के ऊपर खुदी हुई लिखावट को पढ़ा नहीं जा सका इसलिए यह कहना कठिन है कि वे इस पशु को खेती-बाड़ी के कामों में या भार वाहन के लिए इस्तेमाल करते थे अथवा शौकिया पालते थे।

बाहर की दुनिया न जाने कैसी खतरनाक है !

गेंडे के अनाथ बच्चे के विषय में कॉलिन विल्लौक (1964) ने बताया है कि वह मादा बच्ची थी। नील नदी के पास उसकी मां मर गई थी। उसे पकड़कर एक बड़े घेरे में रखा गया। जब वह बड़ी हो गई तब उसे जंगल में छोड़ देने का विचार आया। परन्तु वह उस जगह को छोड़कर जाना ही नहीं चाहती थी। इसका कारण उसके दिल में बसा भय तथा आत्मविश्वास की कमी थी। जब वह बहुत नन्ही थी तब उसे अपने घेरे के चारों ओर जंगल में बबर शेरों की गरज अकसर सुनाई देती रहती थी। अब बड़ी हो जाने पर भी शायद वह सोचती थी कि बाहर की दुनिया न जाने कैसी खतरनाक है !

विविध नाम, जातियां

शरीर की रचना

गेंडे का भार सामान्यतः 2,000 से 3,000 किलोग्राम होता है। उगांडा में सफेद मादा गेंडा पकड़ी गई थी जिसका वजन 3,500 किलोग्राम के लगभग था। हाथी के बाद धरती पर विचरने वाला यह सबसे भारी जीवित प्राणी है। दो साल के बच्चे का भार लगभग 500 किलोग्राम होता है। भारी-भरकम शरीर की तुलना में इसका कद छोटा होता है। एशिया की जातियों में भारत का एक सींग वाला गेंडा सबसे बड़ा गेंडा है। कंधे पर इसकी कुल ऊंचाई लगभग 180 सेंटीमीटर होती है। थूंथनी से लगाकर पूंछ के सिरे तक की लंबाई 315 सेंटीमीटर होती है। बौनी टांगें जहां शरीर के साथ मिलती हैं वहां खाल की तहें ऐसी दीखती हैं मानो ढालों की तहें मढ़ी हों। खाल बहुत मोटी, कवच जैसी और काले-सलेटी रंग की होती है जिस पर बाल इतने विरल होते हैं मानो हों ही नहीं। हां, कान और पूंछ पर बाल उगे रहते हैं।

पैर छोटे और गठीले होते हैं। प्रत्येक पैर में तीन अंगुलियां होती हैं जो खुरनुमा नाखून में समाप्त होती है। तीसरी या बीच की अंगुली सबसे अधिक उन्नत होती है। गेंडे के नाखून हाथी के नाखून जैसे लगते हैं।

इस पशु में हंसलियां (collar bones) नहीं होतीं। सिर बड़ा और आंखें छोटी होती हैं। मुंह भद्दा-सा दीखता है, उसके ऊपर संगीन सरीखा निकला हुआ सींग भयानक जान पड़ता है। दूर से देखने पर नर और मादा गेंडे में कोई अंतर नहीं मालूम पड़ता क्योंकि दोनों की थूंथनी पर एक ही जैसा सींग उगा होता है।

ऊपरला ओठ जबड़े के साथ सटा हुआ न होकर ढीला-सा तथा नोकीला होता है। इसे बढ़ाकर वह घास और टहनी को पकड़ता है, खींचकर झुका लेता है और दांतों से काट लेता है। ये महाकाय जानवर अनेक प्रकार की आवाजों द्वारा अपनी कोमल और कठोर भावनाओं को प्रकट करते हैं। दुश्मन को डराने के लिए फुंकारते हैं, घुरघुराकर धमकी देते हैं और ऊंचा गरजते हैं। लड़ते हुए गेंडे घुड़कते हैं और चीखते हैं। जोड़ा बनाते समय नर और मादा गेंडों का शोर सीटियों की आवाज जैसा होता है। खेलपसंद नवजात बच्चा किलोल करता हुआ दूर भाग जाता है तब मां दुलार से मिऊं...मिऊं जैसी आवाज करके उसे बुलाती है।

सींग—चिपके हुए बालों का गुच्छा

गेंडे के सींग की रचना अन्य पशुओं के सींगों से बिलकुल भिन्न होती है। वास्तव में यह सींग है ही नहीं, परन्तु आपस में मिलकर चिपके हुए बालों का एक समूह है जो बहुत कठोर बन गया होता है। ये बाल शृंगी तंतुओं के एक साथ मिल जाने से बने होते हैं। यह सींग कपाल की हड्डी से जुड़ा हुआ नहीं होता जैसे कि ढोर-डंगर तथा मृगों के सींग हड्डियों के साथ ही बढ़ी हुई रचनाएं होती हैं। गेंडे का सींग अधिचर्मीय होता है और मांस के अंदर तक ही गया होता है। धकेला जाने पर यह बायें-दायें मामूली-सा हिल सकता है। जोर की चोट लगने पर यह टूट जाता है। चोरी छिपे शिकार करने वाले सींग की जड़ में लाठी से कसकर प्रहार करके इसे तोड़ लेते हैं। फलस्वरूप बने जख्म में से बहुत खून बहता है। एक बरस के भीतर ही वहां नया सींग उगना शुरू हो जाता है। सींग की लंबाई 30 से 45 सेंटीमीटर होती है। औसत सींग 20 सेंटीमीटर से बड़ा नहीं होता। भारतीय गेंडे का सबसे बड़ा सींग 61 सेंटीमीटर लंबा देखा गया है जो ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित है। दिल्ली के चिड़ियाघर में मोहन गेंडे का सींग 15 सेंटीमीटर से बड़ा नहीं था। अनेक गेंडों का सींग छोटे ठूंठ सरीखा ही होता है। विकसित नहीं होता।

आत्मरक्षा या दुश्मन पर हमला करने के हथियार के रूप में भारतीय गेंडा अपने सींग का प्रयोग नहीं करता। हां, अफ्रीकी गेंडा इस्तेमाल करता है। भारतीय गेंडे के ऊपरले और निचले जबड़े में जो लंबे किल्ले (tushes) होते हैं उनसे वह अपने दुश्मन पर चोट करने की कोशिश करता है। इस प्रक्रिया में वह सिर को ऊपर धकेलता है। इससे यह कल्पना कर ली जाती है कि वह सींग मार रहा है। इसके विपरीत अफ्रीकी गेंडे के जबड़े छोटे रहते हैं और उसमें भारतीय गेंडे जैसी शक्तिशाली दाढ़ों का अभाव होता है।

अफ्रीकी गेंडे के लिए सींग एक हथियार है। वह उसे घिसकर पैना रखता है, परन्तु भारतीय गेंडा ऐसा नहीं करता और न ही उसे इसकी आवश्यकता होती है। हां, भारतीय गेंडे को हमने चिड़ियाघरों में कई बार दीवार के साथ या सीखचों के साथ सींग रगड़ते हुए देखा है। इसका कारण सींग की जड़ में लगे वे पराश्रयी होते हैं जो खुजली पैदा कर रहे होते हैं। गेंडा केवल खुजलाहट को मिटाने के लिए सींग को रगड़ता है। शिकागो के ब्रुक फील्ड चिड़ियाघर में भारतीय गेंडे का जोड़ा सींगों को रगड़ा करता था। चिड़ियाघर के सहायक संचालक राल्फ ग्राहम ने पराश्रयियों को मारने की कुछ दवाएं कीचड़ में मिलाकर सींग पर लगा दीं। इससे उनकी सींगों को घिसने की आदत तो छूट ही गई, उनके सींग भी ठीक तरह बढ़ने लगे।

मेन विश्वविद्यालय के एक अमेरिकी जीवशास्त्री डॉक्टर डब्ल्यू. एफ. डोव ने 1933 में एक बैल के मस्तक पर मामूली-सा ऑपरेशन करके यह सिद्ध कर दिया था कि पशुओं के मस्तक पर गेंडे (युनिकॉर्न-एकशृंग) के सींग जैसा सींग उगाया जा सकता है।

एकशृंग

ईस्वी पूर्व पांचवीं सदी से लेकर ऐतिहासिक काल में लोगों का विश्वास रहा है कि एक सींग वाला कोई पशु भी होता है। इसे एकशृंग (युनिकॉर्न) कहते थे। इसके रूप और आकार अनेक प्रकार के बताये जाते थे। कुछ विवरणों में इसका शरीर तथा सिर घोड़े सरीखा, पिछली टांगें हिरण की टांगों जैसी और पूंछ बबर शेर की पूंछ के समान लिखी है। ईसा पूर्व चौथी सदी के यूनानी इतिहासकार क्टेसियस के अनुसार भारत में एक ऐसा जंगली गधा पाया जाता है जिसका सिर गाढ़े लाल रंग का और आंखें गहरी नीली होती हैं। जिसके माथे पर 60 सेंटीमीटर से अधिक लंबा सींग होता है, इसकी वायु के समान प्रचंड गति होती है। और उसके सींग से बने प्याले में विष निवारण करने की अनुपम शक्ति हैती है। क्टेसियस से 50 बरस बाद सिकंदर महान् के समकालीन एक इतिहासकार अरस्तू हुआ। उसके अनुसार एकशृंग के दो भेद हैं। इनमें एक तो पूर्व उल्लिखित भारतीय गधा था और दूसरा एबिसीनिया (हब्श) का औरिक्स नामक हिरण था। यूनानी वैज्ञानिक प्लीनी की नेचुरल हिस्ट्री के अनुसार संसार में तीन किस्म के एकशृंग हैं—इनमें पहला भारत का गधा, दूसरा भारत का बैल और तीसरा एबिसीनिया का ओरिक्स। एक और यूनानी इतिहासकार स्त्राबो ने लिखा है कि भारत में बारहसिंगे के समान सिर वाला एक सींग वाला घोड़ा पाया जाता है।

इन इतिहासकारों के वर्णनों से पता चलता है कि प्राचीनकाल से एकशृंग संबंधी कल्पनाओं का उत्पत्ति स्थान भारत ही था। यहां से यह कल्पना पूर्वी और पश्चिमी देशों में गई थी। ईसा पूर्व पांचवीं अथवा चौथी सदी में यह कल्पना चीन पहुंची। लगभग इसी समय यह विवरण यूनानी इतिहासकार क्टेसियस को पता चला। चीन के प्रसिद्ध धार्मिक नेता कन्फूशियस की लिखी 'लि-चि' नामक नैतिक पुस्तक में चार अलौकिक पशुओं का बर्णन है। इनमें से एक 'लिन' है जो एक सींग वाला पशु है। चीनियों का विश्वास था कि एकशृंग 'लिन' सृष्टि में सर्वोत्कृष्ट पशु है तथा समस्त दिव्य गुणों का स्वामी है।

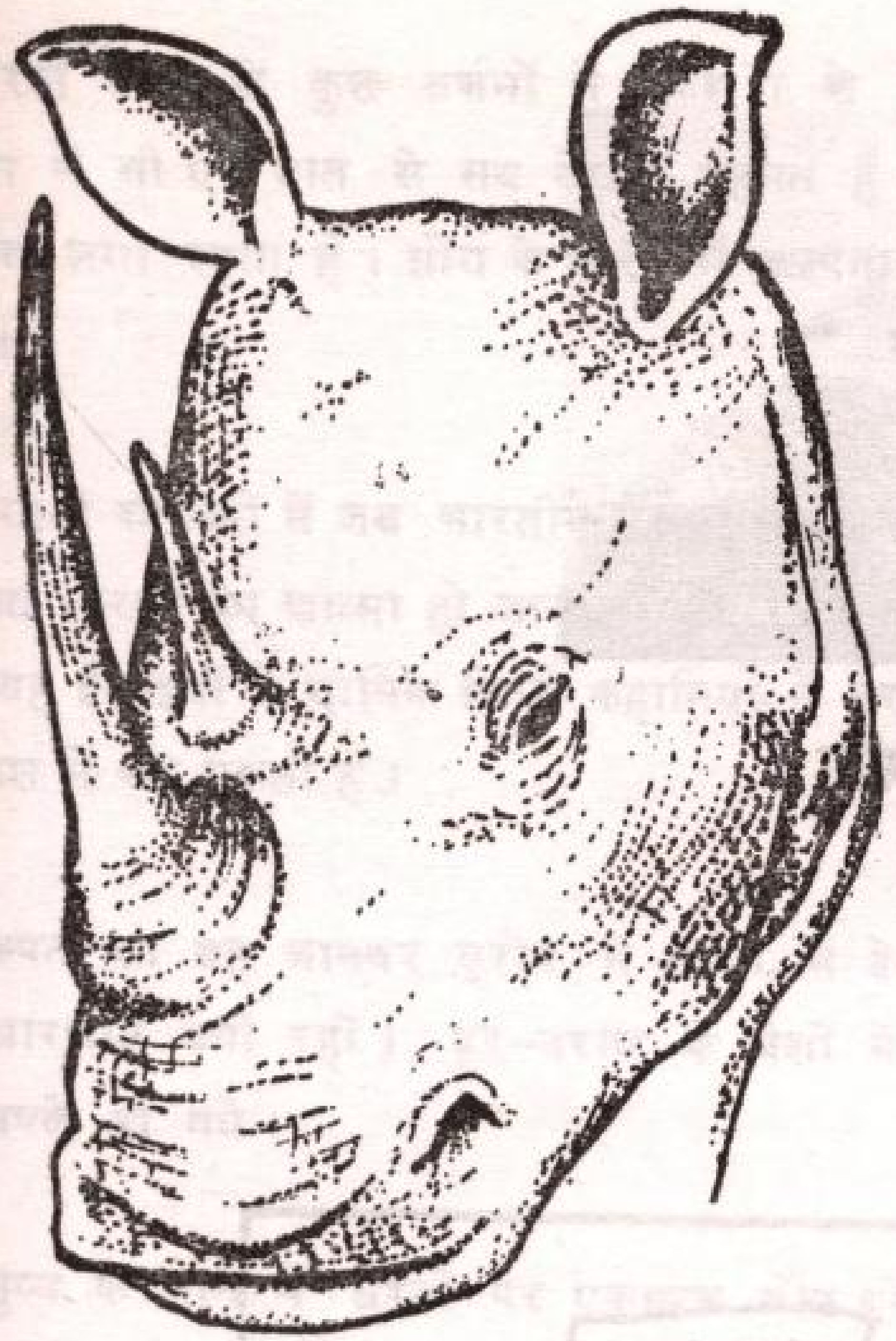

अफ्रीका के सफ़ेद गेंडे का ओठ चपटा होता है

भारतीय गेंडे का ऊपरला ओठ नोकीला होता है

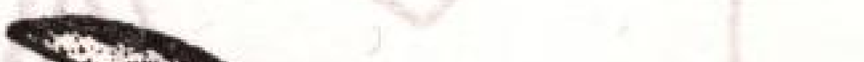

भारतीय गेंडे का सबसे लंबा सींग

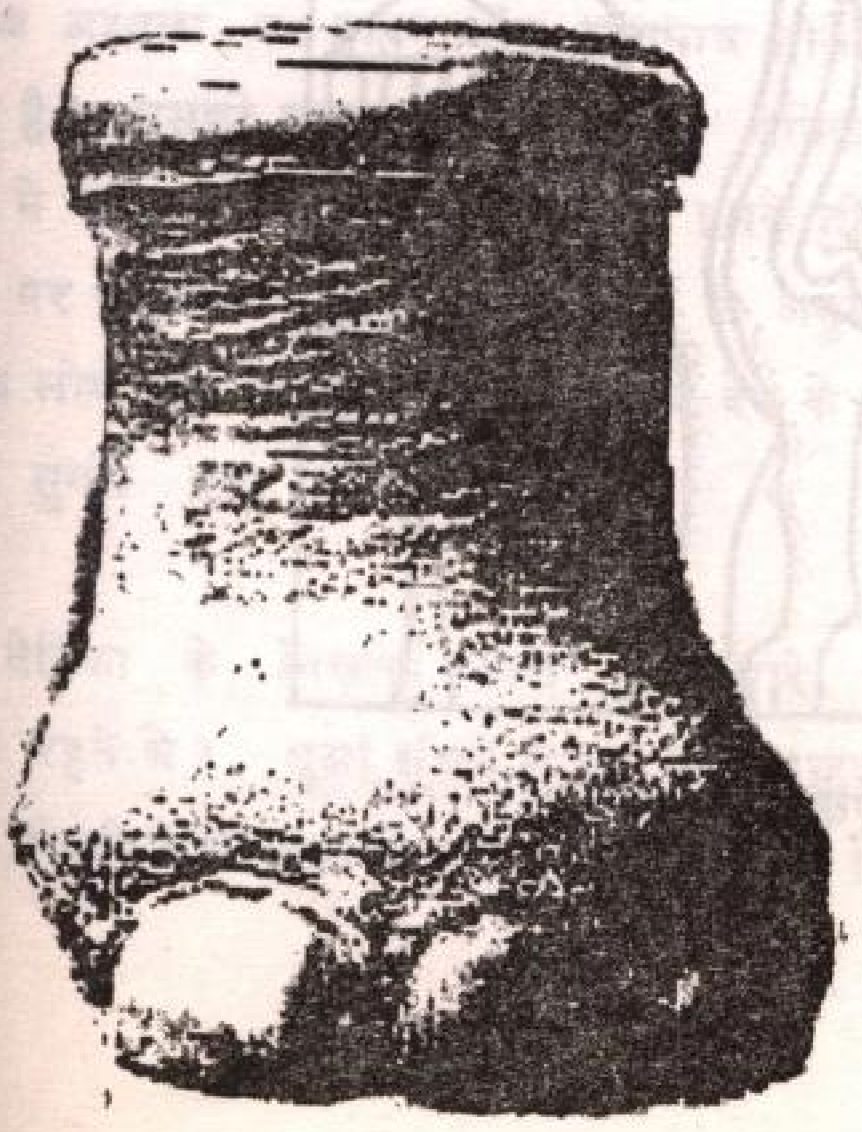

गेंडे की टांग की खाल का मूढ़ा

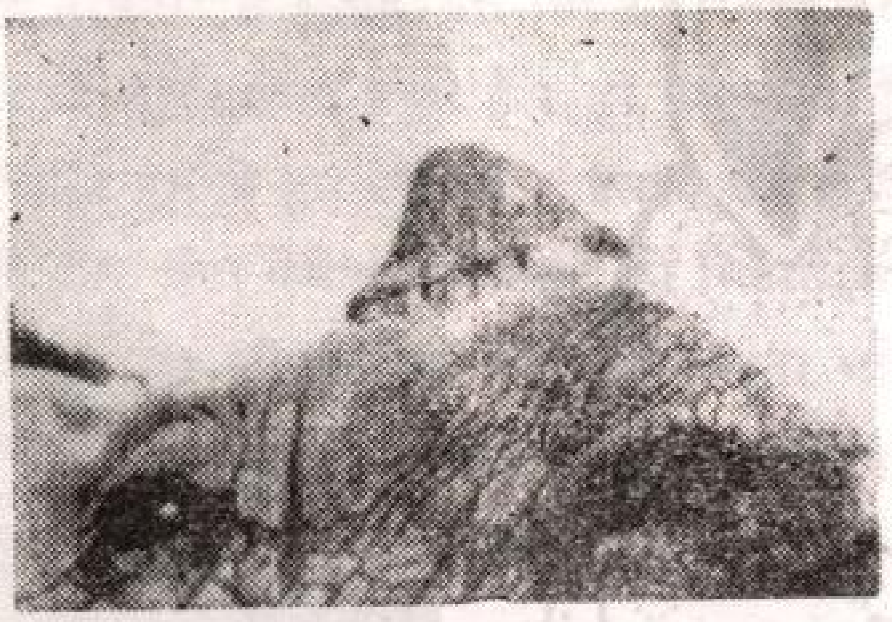

ठूंठ सरीखा सींग

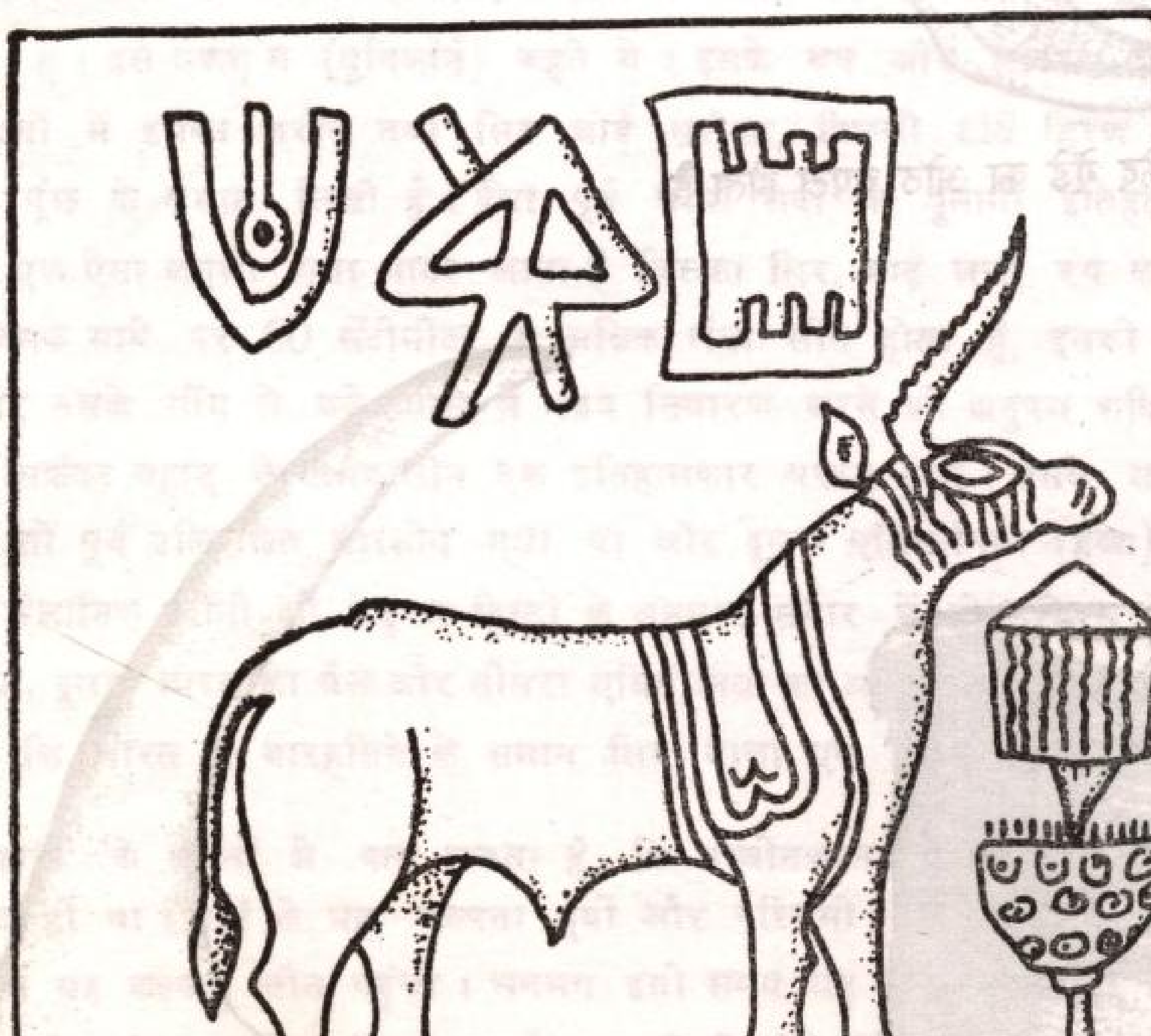

काल्पनिक दिव्य पशु- एंकशृंग

विविध भाषाओं में नाम

संस्कृत में नाम : चरक, सुश्रुत और कालिदास ने गेंडे का खड्ग और खड्गी नामों से उल्लेख किया है। मनु ने इसका खड्ग नाम लिखा है। खड्ग का शाब्दिक अर्थ तलवार है। मुख के ऊपर नाक पर उगे हुए सींग की आकृति तलवार के सदृश होने के कारण ये नाम पड़े हैं। हलायुध कोश में गेंडे के ये 11 संस्कृत नाम संगृहीत हैं :

खड्ग, खड्ग मृग	: तलवार सदृश सींग धारण करने वाला पशु।
तुंग मुख	: जिसके मुख के ऊपर ऊंचा उभार होता है।
क्रोडी मुख, वार्ध्रीणस	: जिसकी नाक उठी हुई होती है।
वज्रचर्मा	: कठोर चमड़ी वाला।
गण्ड, गण्डक	: जिसकी खाल पर गुमड़ी जैसे उभार पड़े हों।
बली	: वलवान।
एकचर	: अकेला विचरने वाला।
गणोत्साह	: ?

दिल्ली के फिरोजशाह कोटला में अशोक स्तंभ के पांचवें लेख में गेंडे के लिए पलसत शब्द आया है। यह पालि के पलासाद शब्द से निकला है। इसका शाब्दिक अर्थ पत्ते खाने वाला है। पालि भाषा में लिखी जातक कथाओं में इस पशु के लिए पलसत और पलासाद दोनों शब्दों का प्रयोग किया गया है। संस्कृत साहित्य में इन शब्दों का प्रचलन नहीं हुआ।

अन्य भाषाओं में नाम

हिंदी का गेंडा शब्द संस्कृत के गंड और गंडक से निकला है। प्राणिशास्त्र में इसका वैज्ञानिक नाम रीनोचेरोस ऊनीकोर्निस लिनिअस (Rhinoceros unicornis Linnaeus) है। रीनोचेरोस लेटिन भाषा का शब्द है जो ग्रीक में रीनोकेरोस (rhinokeros) हो गया है। राइस (rhis) या रीचनोस (rhinoce) का अर्थ नाक और केरोस का अर्थ सींग है। रीनोचेरोस ऊनीकोर्निस का अर्थ हुआ ऐसा प्राणी जिसकी नाक के ऊपर एक सींग होता है। प्राणिशास्त्र में भारतीय गेंडे के पुराने नाम थे—रीनोचेरोस इंडिकुस कुव. (Rhinoceros indicus Cuv.) औ रीनोचेरोस स्तेनोचेफालुस ग्रे (Rhinoceros stenocephalus Gray)।

विविध भाषाओं में नाम

संस्कृत में नाम : चरक, सुश्रुत और कालिदास ने गेंडे का खड्ग और खड्गी नामों से उल्लेख किया है। मनु ने इसका खड्ग नाम लिखा है। खड्ग का शाब्दिक अर्थ तलवार है। मुख के ऊपर नाक पर उगे हुए सींग की आकृति तलवार के सदृश होने के कारण ये नाम पड़े हैं। हलायुध कोश में गेंडे के ये 11 संस्कृत नाम संगृहीत हैं :

खड्ग, खड्ग मृग	: तलवार सदृश सींग धारण करने वाला पशु।
तुंग मुख	: जिसके मुख के ऊपर ऊंचा उभार होता है।
क्रोडी मुख, वार्ध्रीणस	: जिसकी नाक उठी हुई होती है।
वज्रचर्मा	: कठोर चमड़ी वाला।
गण्ड, गण्डक	: जिसकी खाल पर गुमड़ी जैसे उभार पड़े हों।
बली	: वलवान।
एकचर	: अकेला विचरने वाला।
गणोत्साह	: ?

दिल्ली के फिरोजशाह कोटला में अशोक स्तंभ के पांचवें लेख में गेंडे के लिए पलसत शब्द आया है। यह पालि के पलासाद शब्द से निकला है। इसका शाब्दिक अर्थ पत्ते खाने वाला है। पालि भाषा में लिखी जातक कथाओं में इस पशु के लिए पलसत और पलासाद दोनों शब्दों का प्रयोग किया गया है। संस्कृत साहित्य में इन शब्दों का प्रचलन नहीं हुआ।

अन्य भाषाओं में नाम

हिंदी का गेंडा शब्द संस्कृत के गंड और गंडक से निकला है। प्राणिशास्त्र में इसका वैज्ञानिक नाम रीनोचेरोस ऊनीकोर्निस लिनिअस (Rhinoceros unicornis Linnaeus) है। रीनोचेरोस लेटिन भाषा का शब्द है जो ग्रीक में रीनोकेरोस (rhinokeros) हो गया है। राइस (rhis) या रीचनोस (rhinoce) का अर्थ नाक और केरोस का अर्थ सींग है। रीनोचेरोस ऊनीकोर्निस का अर्थ हुआ ऐसा प्राणी जिसकी नाक के ऊपर एक सींग होता है। प्राणिशास्त्र में भारतीय गेंडे के पुराने नाम थे—रीनोचेरोस इंदिकुस कुव. (Rhinoceros indicus Cuv.) ओ रीनोचेरोस स्तेनोचेफालुस ग्रे (Rhinoceros stenocephalus Gray)।

जातियां

सारे विश्व में गेंडे की पांच जातियां (species) पाई जाती हैं—दो अफ्रीका में और तीन एशिगा में। अफ्रीका की जातियां हैं—अफ्रीकी काला गेंडा और क्षफ्रीको सफेद गेंडा। एशियाई जातियां हैं—भारतीय एक सींग वाला गेंडा जो भारत और नेपाल में मिलता है। प्राणिशास्त्र में इसका नाम रीनोचेरोस ऊनिकोर्निस लिनिअस (Rhinoceros unicornis Linnaeus) है। दूसरी एशियाई जाति जावा का गेंडा है। अंग्रेजी में इसे जावान राइनो (Javan rhino) या लेसर वन-हॉर्न्ड राइनो (Lesser one-horned rhino) कहते हैं। प्राणिशास्त्र में इसका नाम रीनोचेरोस सोन्दाइकुस (Rhinoceros sondaicus) है। तीसरी एशियाई जाति हैं— सुमात्रा का गेंडा या एशियाई दो सींग वाला गेंडा। यह दक्षिण-पूर्व एशिया में पाया जाता है। अंग्रेजी में इसे सुमात्रन राइनो (Sumatran rhino) या एशियाटिक टू-हॉर्न्ड राइनो (Asiatic two-horned rhino) कहते हैं। इसका प्राणिशास्त्रीय नाम रीनोचेरूस सुमात्रेन्सिस (फिश्चर) (Rhinoceros sumatrensis) (Fishcher) है। इसे संस्कृत में लघुत्तम गण्डक कहते हैं।

आकार और डीलडौल में सबसे बड़ा अफ्रीकी स फेद गेंडा है। तब भारतीय गेंडे का नंबर आता है और इसके बाद अफ्रीकी काले गेंडे का। तत्पश्चात् जावा वाला और अंत में सुमात्रा वाले गेंडे का स्थान है।

जहां तक मनुष्य द्वारा संहार किये जाने का सवाल है उसने सभी जातियों का सफाया करने के प्रयत्न किये हैं। प्राणिशास्त्रियों के सर्वेक्षण के अनुसार एशियाई जातियों को अपेक्षाकृत अधिक मारा गया है। इस समय पाई जाने वाली जातियों के गेंडों की आनुमानिक संख्या से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

विश्वास किया जाता है कि इस समय अफ्रीकी काले गेंडे लगभग 3,800 हैं। 1960 के दशक के अंत में लगभग 65,000 थे (हिन्दुस्तान टाइम्स, 28.1.90)। इस गेंडे के सामान्यत: दो सींग होते हैं परंतु अभिलेखों के अनुसार किसी-किसी के तीन सींग भी निकल आते हैं। सामान्य नियम यह है कि अगला सींग अधिक लंबा होता है। आदिवासी इस तरह के गेंडे को बोरेली कहते हैं। जिस गेंडे के दोनों सींग बराबर हों या पिछला सींग बड़ा हो, उसे कीटोला कहते हैं।

गेंडे की बिभिन्न जातियों में सबसे बड़ा अफ्रीका का सफेद गेंडा है। कंधे पर इसकी ऊंचाई कभी-कभी 198 सेंटीमीटर तक पहुंच जाती है और लंबाई 340 सेंटीमीटर तक भी चली जाती हैं। इसका ऊपरला होंठ नोकदार न होकर चपटा होता है जिससे मुख चौरस दीखता है। काले गेंडे के मुकाबले में इसका अगला सींग कहीं अधिक लंबा होता है। यह 171.25 सेंटीमीटर तक भी लंबा देखा गया है। पिछला सींग कभी-कभी 60 सेंटीमीटर तक बढ़ जाता है, परंतु सामान्यतः एक ठूंठ से कुछ ही बड़ा होता है। इसका वजन 2,268 किलोग्राम होता है।

सफेद गेंडा कभी भी विस्तृत क्षेत्र में नहीं पाया जाता रहा। चिड़ियाघरों में भी यह शायद ही कभी देखा गया हो अजायबघरों में भी बहुत हो कम दीर्घाओं (गैलरियों) में इसके भुसभरे नमूने मिलेंगे। अनुमान है कि अफ्रीका में जीवित सफेद गेंडे लगभग 2,500 और 3,500 के बीच में होंगे।

एशियाई गेंडे

एशिया में पाई जाने वाली तीनों जातियों की संख्या कहीं कम है। एक सींग वाले भारतीय गेंडे की कुल संख्या 2,000 होगी।

जावा की एक सींग वाली क्षुद्रतर जाति भारतीय गेंडे के समान भारी गठन की नहीं होती, यद्यपि कंधे पर नापा जाय तो दोनों की ऊंचाई लगभग एक समान होगी। इसका सिर तुलना में छोटा होता है। इस जाति की मादा में सींग नहीं होता। नर का सींग भी बहुत बड़ा नहीं होता। लंदन के नेचुरल हिस्ट्री म्यूजियम में एक सींग सवा इक्कीस सेंटीमीटर लंबा रखा हुआ है। आधार में इसकी परिधि लगभग 50 सेंटीमीटर है। जावा का यह गेंडा पश्चिमी जावा के उद्जोंग कूलोन आरक्षित वन में ही सीमित है। अनुमान है कि इनकी संख्या 25 से 50 के बीच होगी।

सुमात्रा के गेंडे की कंधे पर ऊंचाई 120 से 135 सेंटीमीटर तक होती हैं, थूथनी से पूंछ के सिरे तक यह 240 सेंटीमीटर लंबा होता है। यह गेंडा दो सींग वाला है। इसका अगला सींग बड़ा होता है और पिछला नाममात्र को ही होता है। कुछ लेखकों ने अगले सींग की अधिकतम लंबाई 81.25 सेंटीमीटर और पिछले की 42.50 सेंटीमीटर तक अभिलिखित की है। इसके शरीर पर गहरे-भूरे, लंबे बाल उगे रहते हैं। कानों पर भी बालों की झालर होती है। इसका भार लगभग 1,016 किलोग्राम होता है।

सुमात्रा का गेंड़ा लगभग 4 करोड़ वर्ष पूर्व भी पाया जाता था। गेंडे की जातियों में इसके विकास का इतिहास सबसे अधिक दीर्घकालीन है। तृतीयक काल (tertiary period) के दौरान सुमात्री गेंडे से संबद्ध गेंडे की अनेक जातियां मध्य और पश्चिमी यूरोप के जंगलों में पायी जाती थीं। वे दक्षिणी एशिया में जाकर बस गईं। अनुमान है कि अब सुमात्रा के दो सींग वाले गेंडे 700 से 1,000 के बीच हैं। यह म्यांमार, मलय प्रायद्वीप, बोर्निओ, बांगलादेश में पाये जाते हैं (उ थेइन लिवन, 1998)। 1936 के वन्य प्राणी संरक्षण कानून के अधीन म्यांमार में इसे पूर्ण संरक्षण दिया गया है।

सुमात्री गेंडे के प्राकृतिक आवास बोर्निओ और सुमात्रा से म्यांमार होकर बंगाल और असम तक चले गए थे। इस की संख्या में गिरावट के कारण भी वही थे जो अन्य गेंडों के।

यह मैदानी जंगलों से लेकर 2,000 मीटर की ऊंचाई के वर्षा-प्रचुर वनों में रहता हैं। लगभग 1959 तक यह नागा पहाड़ियों, काचीन स्टेट, उत्तरी सेगांग डिविजन, उत्तरी शान स्टेट और तानिन्थरवीयी डिवीजन में पाया जाता था।

दलदल से दो सौ आदमियों ने निकाला

कानों में बालों वाली एक और जाति भी पाई जाती है। किसी समय इसे सुमात्रा के गेंडे का एक भेद माना जाता था, परंतु अब यह एक अलग जाति स्वीकार कर ली गई है। जनवरी 1968 में पकड़े गये एक

गेंडे का लंदन की जुओलोजिकल सोसाइटी के मंत्री डॉक्टर स्कैलेटर ने वर्णन किया था। यह प्राणी अंततः लंदन भेजा गया था। इसे जुओलोजिकल सोसाइटी ने 1250 पौंड में खरीद लिया था। इसके कानों के ऊपर एक बालदार झालर थी। इसका शरीर लंबे, बारीक लाली लिए हुए भूरे रंग के बालों से ढका था। सुमात्रा के गेंडे की तुलना में इसकी त्वचा अधिक चिकनी थी और अपेक्षाकृत अधिक सूक्ष्म कणों वाली थी। इसकी पूंछ भी अधिक छोटी थी।

इसे पकड़ने का विवरण कलकत्ता के एक समाचार-पत्र में छपा था। गहरी बालू के दलदल में कुछ आदिवासियों ने इसे बुरी तरह थका हुआ और हारा हुआ पाया। दलदल से निकलने की कोशिशों में यह एकदम निढाल हो चुका था। इसके गले में रस्से डालकर आखिर दो सौ आदमियों की सहायता से इसे खींचा गया। उसके बाद एक पेड़ के तने के साथ रस्सों के सिरे बांध दिये गये। तब प्राणी को पैदल चलाकर चटगांव ले जाने के प्रबंध किये गये। उसकी एक टांग में रस्सा बांधा गया। रस्से का दूसरा सिरा एक हाथी के साथ बांधा गया था। ऐसे कई पालतू हाथी उस जुलूस में थे जो एक काफिले की शक्ल में उसे सुरक्षित ले जाना चाहते थे। परंतु इस तरीके से बंदी बनाकर ले जाए जाने पर उसने आपत्ति की। विरोधास्वरूप वह जोर से गरजा। हाथी इतने भयभीत हो गये कि भाग खड़े हुए। बड़ी मुश्किल से उसे मार्गरक्षक दल के साथ चलने को बाध्य किया गया। रास्ते में दो नदियां भी पड़ती थीं। सब विघ्न-बाधाओं पर विजय पाते हुए आखिरकार मंजिल पर पहुंच ही गए।

एशिया की तीनों जातियां कभी भारत में मिल जाती थीं। जावा का छोटा एक सींग वाला गेंडा एक समय बंगाल में, विशेषतः सुंदरवन में काफी मिल जाता था। परंतु 1900 के लगभग लुप्त हो गया। सुमात्रा का दो सींग वाला गेंडा लगभग 1935 तक असम की मिजो पहाड़ियों में मिल जाता था। सेंडरसन ने मिजो पहाड़ियों में (जिसे पहले लुशाई पहाड़ियां कहते थे) दो सींग वाला गेंडा देखा था।

साहसी, दबंग योद्धा

अपना इलाका बना लेते हैं

गेंडा अकेला विचरने वाला जानवर है। प्रत्येक गेंडे का अपना इलाका होता है। ऊंची, घनी घास से आच्छादित भूमि के बीच में कहीं-कहीं खुली जगह होती है जिसमें घास के तप्पड़ होते हैं।

घास के एक ही तप्पड़ में चरते हुए दो नर गेंडे एक-दूसरे से फासला बनाए रखते हैं। मादाओं पर यह प्रतिबंध नहीं लागू होता। नर अपने इलाके के दायरे में दूसरे नर को देखकर ऐतराज नहीं करता। अपनी भूमि पर दूसरे नर का चरना भी बर्दाश्त कर लेता है। दूसरा नर ज्यादा नजदीक आए तब आपत्ति करता है। चरते समय दूसरा नर उसके अधिक पास आ जाय तो गेंडा ललकारता हुआ-सा प्रतिक्रिया दिखाता है। भिड़ने के लिए तैयार योद्धा के समान घुरघुराता हुआ घुसपैठिये की ओर दो कदम बढ़ाता है। कभी-कभी घुसपैठिया मैदान नहीं छोड़ता तो मामूली सी तकरार भी हो सकती है। लेकिन सामान्यता गुसपैठिया तप्पड़ में मालिक के चरने के अधिकार का आदर करता है और चला जाता है। ललकारने वाला गेंडा उसका पीछा नहीं करता, चरने के लिए लौट आता है।

इस प्रकार का व्यवहार इलाके की प्रभुसत्ता को जताने की सहजभावना को नहीं प्रकट करता। दरअसल, क्षेत्रीय गेंडा दूसरे नर के आने से खतरा महसूस करता है इसलिए उसकी प्रतिकार करने की सहजवृत्ति उत्तेजित हो जाती है।

क्षेत्रीय गेंडा अपनी रक्षा के लिए आवश्यक लक्ष्मण रेखा 30 मीटर के लगभग मानता है। इस परिधि के बाहर वह किसी की मौजूदगी की परवाह नहीं करता। लक्ष्मण रेखा के अंदर दूसरे नर के प्रवेश होने पर उसके प्रतिरक्षात्मक साधन सक्रिय हो जाते हैं।

नींद में खर्राटे

गेंडा रात ने विचरने वाला जीव है। यह गरमी और लू जल्दी खा जाता है। इसलिए दिन भर अपनी ठंडी मांदों के अंदर कीचड़ में लेटा रहता है। गेंडों का नित्यकर्म सूरज छिपने से पहले ही शुरू हो जाता है। वे अपनी मांदों से निकलकर घास के मैदानों में चरने या जलधाराओं में पानी पीने निकल पड़ते हैं। इनमें झुंड में रहने की बुद्धि नहीं होती। ये अकेले रहते हैं। बड़े हो जाने पर बच्चे मां से अलग हो जाते हैं।

सोता हुआ गेंडा खर्राटे लेता है मो दूर तक सुनाई देते हैं। हवा अनुकूल हो और पानी या कीचड़ में लोट लगाता हुआ गेंडा सो रहा हो तो आहट किये बगैर उसके काफी नजदीक पहुंच सकते हैं। अवैध शिकारियों को इस बात का ज्ञान हो गया है कि गेंडों को मारने का सबसे अच्छा स्थान लोट लगाने की जगहे है। लोट लगाते हुए गेंडों को मारने की अनेक घटनाएं प्रकाश में आई है।

गेंडे रात में कुछ घंटों के लिए और दिन के अपेक्षाकृत गरम समय में घास के अंदर सो जाते हैं। जमीन पर सोते समय इसकी अगली टांगे ढोरों के समान सिमटकर छाती के साथ लगी रहती हैं।

अड़तालीस किलोमीटर की रफ्तार

गेंडे की दृष्टि इतनी तीव्र नहीं होती। परंतु ऐसी कमजोर भी नहीं होती। पकड़ने की प्रक्रियाओं में देखा गया है कि ट्रक के पार्श्व में यदि बिस्कुट के बराबर एक निशान हो तो उसे वह 25 मीटर की दूरी से देखकर अपने सींग से निशाना साध सकता है। दूसरे चौपायों के समान गेंडा भी उछलता हुआ बड़े वेग से भाग सकता है, कूद सकता है, ट्विस्ट कर सकता है और झटपट मुड़ सकता है। हाथी इनमें से कुछ भी नहीं कर सकता। छोटी टांगे और 1,350 किलोग्राम वजन होने के बावजूद यह 48 किलोमीटर प्रति घंटा की रफ्तार से दौड़ सकता है।

गेंडे का जीवनकाल लगभग 60-70 बरस है। अनुमान है कि बंदी जीवन में इनकी आयु कुछ बढ़ जाती है। पुराने विश्वासों में पशु-जगत् में सबसे अधिक उम्र एकशृंगी गेंडे की कही जाती है। पहले जमाने के लोगों की मान्यताओं के अनुसार यह कम-से-कम दो हजार साल तक जिंदा रहता है।

मोटर साइकिलों को तोड़ दिया

स्वभाव से यह डरपोक जानवर है। मनुष्य को कम ही मारता है परन्तु, घायल और क्रुध हो जाने पर सूअर की तरह गुरगुराता हुआ बड़ा भयंकर हमला करता है। यह सचमुच प्राचीन युग के प्राणियों की याद दिलाता है जिनमे देह तो खूब विशाल बन गई होती है परंतु उसकी तुलना में मस्तिष्क का विकास नहीं हुआ होत।।

21 मई, 1983 को एक वयस्क गेंडा तेजपुर की बस्ती में घुस आया और ऊधम मचाने लगा। लोग भागने लगे। विश्वास किया जाता था कि गेंडा काजीरंगा क्षेत्र से ब्रह्मपुत्र पार करके बस्ती में घुसा था। मुख्य सड़कों पर शान से गुजरते हुए उसने गश्ती ड्यूटी पर तैनात फौजी जवानों का पीछा किया। स्थूलचर्मी ने कुछ रिक्शाओं और मोटर साइकिलों को भी नुकसान पहुंचाया। बाद में उसने अपनी दिशा बदल दी और पश्चिमी दिशा में पड़ोस के गांवों की तरफ चला गया।

जीप को पलट दिया

बेहद खतरे और भय से डरा हुआ गेंड़ा मुसीबत से निकलने के लिए तोड़फोड़ करने पर आमादा हो जाता है। जान-माल की सुरक्षा के लिए उसे शूट कर देना पड़ता है। इसके लिए किसी शक्तिशाली राइफल द्वारा फौलाद की नोक वाली गोली इस्तेमाल की जाती है और मस्तिष्क को निशाना बनाया जाता है।

डिविजनल फॉरेस्ट ऑफिसर लाहन ने ऐसे एक अभागे गेंडे के बारे में बताया है। वह बोकाखाट के नजदीक चाय बागान में भटक आया था। चाय की पत्तियां तोड़ने वाले चाय-बगीचे के उस हिस्से में घुसने से डरने लगे थे। उससे निबटने के लिए लोगोंने लाहन से अनुरोध किया। हवा में खाली फायर करके उसने गेंडे को भगाने की कोशिश की। इससे वह भड़क गया और आपे से बा र हो गया। उसे सबसे पहले लाहन की खड़ी हुई जीप दिखाई दी। उसने फालतू पहिये के टायर को फाड़कर धज्जियां उड़ादी। सिर नीचे डालकर वाहन को पलट दिया और तोड़-फोड़ डाला। उपद्रवी गेंडे ने इलाके में बहुत आतंक फैला दिया था। आखिर, उसे शूट कर देगा पड़ा।

आदमी—जानी दुश्मन

आदमी से सामना हो जाने पर यदि गेंडा खूंखारपन दिखाता है तो उसका कारण यह है कि वह आदमी को जानी दुश्मन मानता है। इसे उसकी मूर्खता तथा दुःसाहस कहा जा सकता है। आदमी इसके नजदीक जा रहा हो तो यह चुपके से खिसककर दूर नहीं चला जाता। अधिकतर जानवरों की सहजप्रवृत्ति होती है कि वे खतरे से दूर भाग जाते हैं। लेकिन गेंडा उतावलेपन से उस पर हमला करने को बढ़ता है। इसलिए इसे आक्रामक और लड़ाकू जानवर कहा जाता है। गेंडा अन्य जानवरों के साथ जंगल में दोस्ताना तरीके से रहता है। इसके निवासों में इंसान शांतिपूर्वक जाय, उसे परेशान न करे और उसे भरोसा हो जाय कि यह उसे मारेगा नहीं तो उसकी आक्रामक प्रवृत्ति खत्म हो जाती है। चिड़ियाघरों में तो ऐसा देखा ही गया है, काजीरंगा जैसे प्राकृतिक आवासों में भी देखा गया है। कोहोरा में गेंडों को देखने के लिए पर्यटकों की अधिक आवाजाही है,

पर्यटक उसे कुछ नहीं कहते, इसलिए वहां के गेंडे अपेक्षाकृत विनीत बन गए हैं। पर्यटकों को लेकर पार्क के पालतू हाथी उनके पास पहुंच जाते हैं। लेकिन बगोरी में यह बात नहीं। वहां केवल वन विभाग के कर्मचारियों का प्रवेश है, गेंडों का इंसान से डर नहीं निकला और उनका इंसान के प्रति विद्वेष बना हुआ है।

गेंडी का दूध दुह लेता था

चिड़ियाघरों में बंदी अवस्था में रहते हुए गेंडों में आक्रामक प्रवृत्ति खत्म हो जाती है। जंगल के आवास में तो वह हरदम चौकन्ना और आशंकित रहता है, बंदी अवस्था में यह प्रवृत्ति खत्म हो जाती है। बंदीगृह में लाये गये गेंडे के नये बच्चे में कुछ समय तक यह प्रवृत्ति देखी जाती है। इंसान के संपर्क में रहने की आदत बन जाने पर उसका व्यवहार बदल जाता है।

चिड़ियाघर में बच्चे वाली मां का अपने नर संगी के प्रति आक्रामाक रवयै हो सकता है, पर पालक के प्रति नहीं। गुवाहटी चिड़ियाघर का एक बहुत दिलचस्प उदाहरण है। वहां एक गेंडी अपने बच्चे को छूने और प्यार करने के लिए पालक को मना नहीं करती थी। बालक ने मां और बेटे से इतनी अधिक आत्मीयता बढ़ा ली थी कि वह उसका दूध भी दुह लेता था इससे चिड़ियाघर के अधिकारियों को रासायनिक विश्लेषण करके पौष्टिक पदार्थ जानने के लिए गेंडे के दूध के नमूने मिल जाते थे।

निर्जीव इंसान को सूँघकर चला गया

काजीरंगा पार्क के बीच से फोरेस्ट औफिसर जीप पर जा रहे थे। अचानक गेंडा सामने आ गया। गेंडे ने हमलावर रुख नहीं दिखाया। सोनोवाल ने इंजिन बंद कर दिया, अपनी सीट पर बिलकुल चुपचाप जड़-मूर्ति के समान समाधिस्थ बैठ गए। गेंडा सीधा गाड़ी तक आ गया। उसने सहमी हुई काष्ठमौन मूर्ति को सूंघा। समाधिस्थ सोनोवाल ने सांस रोक ली थी। भीतर के रक्त संचार के अलावा शरीर में कोई गति नहीं थी। निर्जीव इंसान को सूंघकर वह टहलता हुआ धीरे-धीरे चला गया।

गांव के पड़ोस में सुरक्षा

बूढ़े गेंडे कभी-कभी पार्क के अंदर बने फॉरेस्ट कैंपों के नजदीक रहने लगते हैं। वे समझते हैं कि इंसान के पास रहने से वे जंगल-जीवन की मुश्किलों और विपत्तियों से बचे रहेंगे। यहां वे सुरक्षित रहेंगे। बुढ़ापा आराम से कट जाएगा। जंगल के कर्मचारी ऐसे गेंडों को नमक देते हैं और उनकी कुछ अन्य जरूरतों का खयाल रखते हैं। ऐसे गेंडे अधिकतर नर होते हैं। जिंदगी की आखिरी मंजिल में पहुंचने पर वे अधिक तगड़े गेंडों से अपनी रक्षा करने में अक्षम अनुभव करते हैं। गांव के पास रहने में यह लाभ भी है कि जवान गेंडे वहां नहीं आते। ये बूढ़े गेंडे जब यहां आते हैं तब इनका शरीर लड़ाई में बने बड़े-बड़े घावों से भरा होता है। बाद में ये पर्यटकों के लिए आकर्षण बन जाते हैं। काजीरंगा में ऐसे दो गेंडे बहुत विख्यात हो गये थे। एक का नाम बूढ़ा गुंडा (old rogue)था। दूसरे का लड़ाई में कान कट गया था, इसलिए उसे कनकटा कहते थे।

शेर पूंछ दबाकर भाग गया

जंगल के अन्य निवासियों के साथ गेंडे पूर्ण सामंजस्य में रहते हैं। जंगली भैंसों के झुडों, हिरणों, जंगली सूअर तथा अन्य जानवरों के साथ शांतिपूर्वक चरते रहते हैं। बिलोडन-स्थानों में जंगली भैंसे भी नजदीक में बिलोडन करती रहती हैं। गेंडे उनकी परवाह नहीं करते।

शेर को देखकर गेंडा अकारण परेशान नहीं होता। गुजरते हुए शेर को चौकन्ना होकर वेखता भर है। हां, गेंडी के साथ बच्चा हो तो वह शेर को खदेड़ देती है। सोनोवाल ने एक बार शानदार तरीके से खदेड़ते हुए देखा था। शेर टांगों के बीच में दुम दबाकर भाग गया।

हाथी मैदान में नहीं डटता

शेर के समान हाथी भी गेंडे से डरता है। क्योंकि वह अपनी शक्तिशाली दतलियों (tushes) से उसकी नाजुक सूंड को जख्मी कर सकता है। जंगली हाथियों के साथ गेंडों को चरते देखा गया है। कुछ दूरी तक तो वह जंगली हाथियों की मौजूदगी को बर्दाश्त कर लेता है लेकिन उन्हें अधिक नजदीक आने की इजाजत नहीं देता। गेंडों को फुफकारते हुए जंगली हाथियों को ललकारने जैसी चेष्टाएं करते हुए देखा गया है। ललकार को स्वीकार कर भिड़ने की बजाय हाथी मैदान छोड़ जाता है।

हाथी मैदान में डटा रहे तो गेंडा अवश्य हार मान जाता है। हाथी घबरा जाये, पीठ दिखाकर भागने लगे तो गेंडा अपना हमला जारी रखता है, अकसर उसे पकड़ लेता है और उसके बाजुओं में गहरे घाव कर देता है।

ढोरों को मार दिया

काजीरंगा में साल भर चरने योग्य घासें बहुतायत में मिल जाती हैं। इसलिए यहां आहार के लिए प्रतिस्पर्द्धा नहीं है। दूसरे गेंडों तथा अन्य जानवरों के प्रति गेंडे की सहिष्णुता का कारण प्रचुर आहार की उपलब्धि भी है। कठिन परिस्थितियों में उसका व्यवहार बदल जाता है। 1989 में बाढ़ के बाद काजीरंगा में गेंडों ने पार्क के नजदीक बहुत-सी पालतू गायों और भैंसों को मार डाला था। बाढ़ के पानी में घास नष्ट हो गई थी। आहार की बहुत कमी हो गई थी। खयाल था कि गेंडों का घातक, आक्रामक रवैया अपनाने का यह कारण था। सुविज्ञों की यह भी मान्यता थी कि इंसान के संपर्क में रहने से पालतू ढोरों के शरीर से भी इंसान की गंध आती है। इस गंध की बजाह से भी गेंडे भड़के हों। उन्हें मारने के लिए गेंडों को उकसाया हो। ऐसा व्यवहार अपवाद रूप से ही देखा जाता है। क्योंकि जंगल में गेंडों द्वारा दूसरी जाति के जानवर को मार डालने के उदाहरण मुश्किल से ही मिलेंगे।

चीतलों को मार दिया

गुवाहाटी चिड़ियाघर में एक ही बाड़े में नर गेंडे के साथ चीतल हिरण रखे हुए थे। गेंडे ने चीतलों को मार दिया था। सभी हत्याएं खाने के समय हुई थीं। इससे जाहिर होता है कि आहार की प्रतिद्वंद्विता के लिए ये घटनाएं हुई थीं। गेंडे ने समझा होगा कि चीतल उसका खाना खा जाएंगे।

इंसान की गंध से विचलित

इंसान को गेंडा अपना दुश्मन समझता है। उसकी गंध मात्र से वह भड़क जाता है। पालतू जानवरों में भी यह गंध समाई होती है। पालतू हाथी पर उसके हमला करने का यही कारण है। पालतू हाथी को गेंडा अपने अधिक समीप नहीं आने देता और अकसर अकारण हमला कर देता है तो इसका कारण यह नहीं है कि उसे हाथी से खतरा होता है, बल्कि हाथी से निकलती हुई आदमी की गंध है।

गेंडा कभी-कभी चलती हुई जीप पर भी हमला कर देता है। उसका लक्ष्य जीप नहीं, उसके अंदर बैठे हुए लोग होते हैं। ऐसी हालत में उससे डरकर भागना नहीं चाहिए। उस पर जीप से ही जवाबी हमला करना चाहिए। जीप के इंजन से जोरदार धुर्.. र् घुर् र् आवाज निकालनी चाहिए और हौर्न बजाकर खूब जोर से शोर मचाना चाहिए। ऐसा भीषण शोर करने वाले 'हाथी' को सामने देखकर गेंडा घूम जाता है और भाग जाता है, ऐसे मौके पर कुछ हवाई फायर कर देना कारगर होता है।

पैदल आदमी को अधिक खतरा

आक्रमणशील गेंडे से सबसे अधिक खतरा पैदल आदमी को होता है। ऐसे बहुत-से उदाहरण हैं जब बचने की कोशिश में भागते हुए आदमी को गेंडे ने मार दिया था या जख्मी कर दिया था। गश्त पर पैदल जाने पर वनरक्षक गेंडे द्वारा बनाई सुरंगनुमा पगडंडियों पर चलते हैं। खतरे से बचने के लिए घनी एकड़ा घास के बीच से भागने की अपेक्षा इन पगडंडियों का सहारा लेना बेहतर होता है।

शिकारी इन पगडंडियों पर ही गढडे खोदते हैं। समय-समय पर इनका निरीक्षण करते रहते हैं। गेंडा बेहद अड़ियल जानवर है, अपनी पगडंडी पर आदमियों को देख ले तो उन्हें कभी नहीं बख्शता, पीछे हटने की बात तो वह सोचता ही नहीं, सीधा हमला करने के लिए बढ़ता है।

हमला करता हुआ भारतीय गेंडा अपने सींग को हथियार के रूप में इस्तेमाल नहीं करता। अपनी दतलियों (tushes) को इस्तेमाल करता है। इसके ऊपरले और निचले जबड़े में काटने वाले दांत (cutting teeth) अधिक विकसित हो जाते है, इन्हें दतलियां कहते हैं। सिर को ऊपर की ओर धकेलते हुए यह दतलियों से काटता है। इस तरह बने घाव भयंकर होते हैं। हमले में सींग इस्तेमाल करे तो उससे मामूली-से क्षत बनते हैं।

बचने के लिए भागता हुआ आदमी गिर जाय अथवा डर के मारे लेट जाय तब भी गेंडा उसे छोड़ता नहीं। अपने अगले पैर के नीचे उसे बार-बार रौंदता है।

दुश्मन की आसन्न मृत्यु पर जयघोष

आसपास पेड़ हों तो उनके बीच में टेढ़ा-मेढ़ा भागने से आदमी का बचाव हो सकता है। पेड़ न हों तब भी सीधी रेखा में न दौड़कर टेढ़ा-मेढ़ा दौड़ना श्रेयस्कर होता है। गेंडा समीप दृष्टि वाला (short-sighted) जानवर है। टेढ़ा-मेढ़ा दौड़ने से वह उसके दृष्टि-पथ से निकल जाता है। तब बचने के अवसर बढ़ जाते हैं। सीधी रेखा में कितना भी तेज दौड़ रहा हो, गेंडे की पकड़ से बच नहीं सकता :

हमला करता हुआ गेंडा भयावह जानवर बन जाता है। वह बड़े वेग से लपकता है, उसका सिर झुका होता है, थूंथनी करीब-करीब जमीन को छू रही होती है, आंखें आधी बंद होती हैं, धूप से पकाई सूखी धरती पर उसके भारी-भरकम पैरों की थाप द्रुतगति से धम-धम पड़ रही होती है। थाप का भयंकर घोष मानो दुश्मन की आसन्न मृत्यु का जयघोष हो।

कीचड़ से प्यार

भारतीय गेंडा पंकिल प्रदेश में रहता है। पानी और कीचड़ में इसे लोट लगाने में आनन्द आता है। विशेष रूप से गर्मियों में, गेंडे के अंदर बहुत अधिक गरमी पैदा होती है। लोट लगाना शरीर का तापमान कम रखने में सहायक होता है।

काजीरंगा नेशनल पार्क में ऐसे अनेक स्थान हैं जहां गेंडे कीचड़ में लोट लगाते हैं। स्थानीय लोग उसे घुली कहते हैं। हिन्दी में ऐसी जगह को लुढ़कन, संस्कृत में विलोडन-स्थान और अंग्रेजी में वैलो (wallow) कहते हैं।

कीचड़ में लोटना जरूरी

गेंडे की मोटी खाल की तहों के अंदर परजीवी चिपटे रहते हैं। कुछ जातियों की मक्खियां वहां अंडे देने की कोशिश करती हैं। लोट लगाने से पानी या कीचड़ में डूबे परजीवियों को जिंदा रह पाने के लिए जरूरी हवा कहीं मिलती। परिणामस्वरूप वे जगह छोड़ देते हैं, या मर जाते हैं।

गेंडे रात को कीचड़ में नहीं लोटते। तड़के ही इन्हें लोट लगाते देखा गया है। यह दिन का सबसे ठंडा समय होता है। इसलिए इस समय लोटने का उद्देश्य शरीर के तापमान को नियंत्रित करना तो नहीं हो सकता, परजीवियों से छुटकारा पाना होता है।

कान के परजीवियों को पक्षी खाते हैं

यदि कीचड़ काफी गहरा है तो गेंडा नीचे तक चला जाता है जिससे सारा शरीर कीचड़ में डूब जाता है और केवल सींग वाली थूंथनी तथा कान सतह के ऊपर रहते हैं। लेकिन, ये बहिःपरजीवी गेंडे के कानों में भी अड्डा लेते हैं। कीचड़ में लोट लगाते हुए कानों पर तो कीचड़ नहीं लगता। कान के परजीवियों से निजात दिलाने का काम कुछ पक्षी करते हैं। शाही, बेफिक्री अंदाज में चरते हुए भीमकाय प्राणी की सवारी का मजा लेते हुए ढोर-बगले, भुजंगे और जंगली मैना देखे जाते हैं जो रह-रहकर उसके कान के अन्दर झांकते हैं और कान की तहों के बीच में चिपटे हुए परजीवियों को चोंच से निकाल लेते हैं।

एक पोखर में बत्तीस गेंडे

बहुत से गेंडों का एक ही विलोडन-स्थान होता है। अलग-अलग दिशाओं में अपने ठिकानों से वे यहां आते हैं। लौटने के बाद उसी रास्ते से लौट जाते हैं। आने-जाने के निश्चित रास्तों पर रोज चलने से पगडंडियां बन

जाती हैं। प्रत्येक विलोडन-स्थान में कई पगडंड़ियां मिलती हुई दिखाई देती हैं। काजीरंगा के अन्दर बड़ेकटी में एक छोटे-से पोखर में एक बार 32 गेंडों को लौटते देखा गया था।

ई.पी.जी. ने एक घुली में एक साथ सात गेंडे देखे थे। ये अलग-अलग दिशाओं से आए थे। छेड़े जाने पर ये घुली से निकलकर अलग-अलग सात दिशाओं में चले गए।

अनेक गेंडों का एक साथ लोटना सरदियों में विशेष रूप से देखा जाता है जब अपेक्षाकृत छोटी बीलें सूखने लगती हैं। कीचड़ में गेंडे उसी तरह एक-दूसरे के साथ बहुत सटे हुए रहते हैं जैसे कि बहुत-सी भैंसे पानी में बैठती हैं। एक की थूंथनी दूसरे की बखियों को करीक-करीब छू रही होती है। विलोडन करते हुए गेंडों की एक विशेष बात यह है कि उनके मुँह हमेशा किनारे की तरफ रहते हैं, पिछला हिस्सा कभी उधर नहीं रखते। यह व्यवस्था आत्मरक्षा के लिए अपनाई जाती है। इससे किनारे पर आने वाले किसी अवाञ्छनीय घुसपैठिये को देखना सुगम होता है, और, आवश्यक हो तो तुरन्त भागा जा सकता है। स्नान-कुंड में भीड़ के बावजूद धकापेल या धक्काम-धक्का नहीं होती। नवागंतुक को जरा इधर-उधर खिसककर जगह दे दी जाती है। जरा-सी इस चहल-पहल के अलावा वे परम शांति और असीम संतुष्टि में पड़े रहते हैं।

जब कोई गेंडा समझता है कि उसने काफी लोट लगा ली और घुली को छोड़ने के लिए उठता है तब एक किस्म की मामूली-सी भगदड़ जैसी मचती है जिसमें ढेर सारा कीचड़ मथा जाता हैं और उछलता है। अचानक सभी गेंडे घुली से निकल आते हैं और अपनी-अपनी पगडंडियों पर विभिन्न दिशालों में चले जाते हैं। घुली के जमघट में जो गेंडा बाद में आया था वह भी चला जाता है।

मुसीबत में सब दोस्त

बाढ़ के दौरान ऊंची भूमि पर छोटे से टुकड़े में बहुत-से गेंडे जमा हो जाते हैं जिनमें नर, मादा और बच्चे भी होते हैं। तब लगता है कि समूह में रहने वाले जानवरों के समान ही इनकी सामाजिक रचना होती है। वहां न कोई संघर्ष दिखाई देता है और न लड़ाई-झगड़ा। बाढ़ का पानी उतरने का सब धैर्य से इंतजार कर रहे होते हैं। बाढ़ खत्म हो जाने पर हरेक गेंडा फिर एकाकी चर्या बिताने के लिए जुदा हो जाता है।

विशेष परिस्थितियों में विपरीत स्वभाव वाले तथा सहज दुश्मन प्राणियों में भी जातीय वैर नहीं रहता। उनमें सद्भाव, सहिष्णुता और दोस्ती हो जाती है। प्रकृति का सूक्ष्म दर्शन करने वाले, चौथी शताब्दी के प्रकृतिविज्ञ कालिहास ने इसके अनेक उदाहरण दिये हैं। ऋतुसंहार में ग्रीष्म ऋतु के वर्णन में वे लिखते हैं, 'जंगल की आग से घबराये हुए और झुलसे हुए हाथी, नीलगाय तथा सिंह घास के जंगल से झट निकल आए हैं। वैर-भाव त्यागकर मित्र बन गए हैं, नदी के चौड़े तथा रेतीले तट पर इकठ्टे होकर विश्राम कर रहें हैं। ग्रीष्म ऋतु की संतप्त करने वाली भीषण गरमी में कुल-वैरी सांपों, मोरों और मेढकों की भी ऐसी हों दशा हो जाती है। कालिदास आगे लिखते हैं : 'धूप से बहुत तपा हुआ और रास्ते की गरम धूल पर रेंगकर आया हुआ यह

फनियर पेड़ की छाया में कुंडली मारकर बैठा है।' एक जगह कालिदास ने देखा था कि 'धूप से मुंह बचाने के लिए मोर ने अपनी गरदन फनियर सांप की कुंडली के अंदर छिपा दी थी।' 'धूप की तपन से बचने के लिए मेढक फनियर सांप की फन की छाया में बैठे हुए थे।'

जल बहुल प्रदेश में रहने वाले पशुओं में चरक (सूत्रस्थान 27 ; 39) और सुश्रुत (सूत्रस्थान 46 ; 94) ने गेंडे को गिनाया है। चिड़ियाघरों में उसे इसी प्रकार का स्थान दिया जाता है। लखनऊ के चिड़ियाघर में इसका बाड़ा एक आदर्श प्राकृतिक आवास बन गया है। चिड़ियाघरों में देखा गया है कि सरदियों में तो यह अपने बाड़े में इधर-उधर घूमता है या धरती पर लेटा रहता है, परंतु मार्च में गरमी शुरू होते ही यह बाड़े के जोहड़ में घुस जाता है और भैंसों की तरह अपने शरीर को सारा-का-सारा पानी में डुबो लेता है। केवल थूंथनी और आंखें बाहर रखता है जिससे ताजी हवा में सांस ले सके और अपने दुश्मन को गौर कर सके। थूंथनी पर बैठनी वाली मक्खियों को यह अपने कानों से उड़ाता रहता है। बरसात में भी जब कीट-पतंगे परेशान करते हैं तब यह अपना अधिक समय जोहड़ के अंदर गुजारता है। पानी से बाहर विचरते समय यह मक्खियों व मच्छरों के दंश से बचने के लिए अपने शरीर पर कीचड़ लपेटे फिरता है।

—o—